चन्दामामा
फरवरी १९७१

कोलगेट डेन्टल क्रीम से सांस की दुर्गंध रोकिये... दंतक्षय का दिन भर प्रतिकार कीजिये!

वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि १० में से ७ लोगों के लिए कोलगेट सांस की दुर्गंध को तत्काल ख़त्म कर देता है और कोलगेट विधि से खाना खाने के तुरंत बाद दांत साफ़ करने पर अब पहले से अधिक लोगों का— अधिक दंतक्षय रुक जाता है। दंत-मंजन के सारे इतिहास की यह एक बेमिसाल घटना है। क्योंकि एक ही बार दांत साफ़ करने पर कोलगेट डेन्टल क्रीम मुंह में दुर्गंध और दंतक्षय पैदा करने वाले ८५ प्रतिशत तक रोगाणुओं को दूर कर देता है। केवल कोलगेट के पास यह प्रमाण है। इसका पिपरमिंट जैसा स्वाद भी कितना अच्छा है— इसलिए बच्चे भी नियमित रूप से कोलगेट डेन्टल क्रीम से दांत साफ़ करना पसंद करते हैं।

COLGATE
DENTAL CREAM

ज़्यादा साफ़ व तरोताज़ा सांस और ज़्यादा सफ़ेद दांतों के लिए... दुनिया में अधिक लोग दूसरे टूथपेस्टों के बजाय कोलगेट ही खरीदते हैं!

DC. G. 41 HN

हिन्दी में सर्वप्रथम : सबसे अधिक लोकप्रिय

ज्ञानभारती बाल पॉकेट बुक्स

की

अब तक १६ रंग-बिरंगी, मनमोहक, रोचक पुस्तकें प्रकाशित हो गई हैं तथा प्रति माह छह नई पुस्तकें प्रकाशित होती रहेंगी। इन्हें आप अपने अखबार विक्रेता या पुस्तक-विक्रेता से मांगिए।

अथवा

१.०० रु० मनीऑर्डर से भेजकर "ज्ञानभारती घरेलू बाल पुस्तकालय योजना" के सदस्य बनिए और घर बैठे डाक से प्रति दूसरे मास छह मनमोहक पुस्तकें तथा ★ बढ़िया कलैण्डर और ★ ज्ञानभारती पत्रिका

मुफ़्त

प्राप्त करिए

★

विशेष विवरण के लिए नीचे लिखे पते पर लिखें :–

ज्ञानभारती बाल पॉकेट बुक्स

विशेश्वरनाथ रोड़ :: लखनऊ (उ० प्र०)

घर घर की कहानी

शंकरनाथ एक मध्यम वर्ग के परिवार का प्रमुख था। वह एक आदर्श पति और आदर्श पिता था। "चादर जितनी लंबी हो, उतने ही पाँव फैलाने चाहिये।" यह उसके जीवन का सिद्धांत था। अपनी औक़ात के बाहर बेहद बढ़े हुए हौसलों के चक्कर में पड़े मध्यम श्रेणी के परिवार महँगाई के इन दिनों में कैसे तबाह हो रहे हैं, शंकरनाथ खुली आँखों देख चुका था।

शंकरनाथ की पत्नी पद्मा एक आदर्श गृहिणी थी। उनका बड़ा पुत्र रवि हाईस्कूल में पढ़ता था। उससे छोटी बहन रूपा और छोटा भाई राजा भी स्कूल में पढ़ते थे। वह परिवार बड़ा सुखी था।

इससे सर्वथा भिन्न एक और परिवार था—वह साधूराम का था। शंकरनाथ जिस दफ़्तर में मैनेजर था, साधूराम उसी दफ़्तर का हेड़ क्लर्क था। उसके पाँच बच्चे थे। साधूराम के जीवन का तत्व शंकरनाथ के विपरीत था! शंकरनाथ की तनख्वाह जहाँ सात सौ थी, वहाँ साधूराम की उससे आधी भी न थी। फिर भी उसके पास एक आलीशान बंगला था। उसकी पत्नी जमुना गहनों से लदी थी और उसके बच्चों की हर ख्वाहिश पूरी हो जाती थी। कैसे?

साधूराम हर जायज़ और नाजायज़ राह पर चलने में झिझकता न था।

इन दोनों परिवारों की आमदनी और खर्च का मेल बैठाने के रास्ते भिन्न थे, एक का सीधा और दूसरे का ठेढा!

तीसरा एक और परिवार था—पद्मा के भाई सीताराम का। उसके सामने आमदनी और खर्च में सामंजस्य बैठाने का कोई प्रश्न ही न था। उसके सामने समस्या थी—

उसके बिगड़े हुए बेटे गोपी को राह पर लाने की और डूबते हुए परिवार को बचाने की। सीताराम की पत्नी जानकी अपने मायके की रईसी के घमण्ड में अपने पति की परवाह न करती थी। और आँख मूँद कर, खुले हाथों अपने बेटे के लाड़-प्यार में रुपये पानी की तरह बहा देती थी। नतीजा यह हुआ कि गोपी आवारा और जुआखोर निकला।

शंकरनाथ जैसे विवेकशील पिता के सामने अचानक एक दिन एक समस्या पैदा हुई। उसके सुशील एवं समझदार पुत्र रवि के दिमाग में किसीने ज़हर घोल दिया—वह कोई और नहीं था, बल्कि रवि के मामा का लड़का गोपी ही था।

बात यों हुई—स्कूल के लड़कों ने अजंता-एल्लोरा की सैर पर जाने का निश्चय किया। रवि विद्यार्थी-समिति का सेक्रटरी था। सैर का ख़र्च हर विद्यार्थी के लिए पचास रुपये तै था। किंतु रवि के माँगने पर उसके पिता ने कहा—"इतना ख़र्च करना हमारे बस की बात नहीं है।" मगर पर्यटन पर जाने के लिए उत्सुक रवि के मन का समाधान कैसे होता? उसके दिमाग में गोपी की ये बातें मंडरा रही थीं—"रवि, क्या तुम नहीं जानते, तुम्हारे पिता के दफ़्तर में तुम्हारे पिता से आधी तनख़्वाह पाने वाले साधूराम के लड़के मुरली को उसके पिता ने सैर के पचास और जेब-ख़र्च के बीस—कुल सत्तर रुपये जो दिये हैं। तो यह बात साफ़ है कि तुम्हारे पिता रुपये ख़र्च करना नहीं चाहते, वे कंजूस हैं।"

गोपी की ये बातें रवि के दिमाग में हलचल मचाये हुए थीं। फिर क्या था, ज़हर का असर हुआ। फिर भी...रवि एक आदर्श माता और पिता का पुत्र था! उसने विद्रोह भी किया, तो गांधीजी के शांतिमय सत्याग्रह को अपनाकर! उसने अपनी माँग की पूर्ति के लिए भूख-हड़ताल शुरू कर दी।

बड़े भाई रवि ने जो मार्ग दिखाया, उस पर बहन रूपा और भाई राजा भी

चले। रूपा को नाटक में पार्ट करने के लिए फ्राक न मिला था और राजा को बाइसिकल की ज़िद थी!

इस तरह शंकरनाथ के शांत परिवार में एक तूफ़ान उठ खड़ा हुआ।

पद्मा परेशान हो गयी! एक ओर पति के प्रति श्रद्धा और दूसरी ओर पुत्र-वात्सल्य—दोनों उसे निभाने थे—उसने व्यथित होकर बच्चों की तरफ़ से सिफ़ारिश करते हुए, किंतु कठोरतापूर्ण शब्दों में पति से कहा—"तुम्हारा भी कैसा पत्थर का दिल है? बच्चे भूखे हैं। क्यों न उनकी माँग पूरी करते?"

शंकरनाथ ने सहज, मृदु एवं प्यार भरे मार्मिक शब्दों में समझाया—"पद्मा, क्या पिछले बीस वर्षों की हमारी ज़िंदगी में तुमने मेरे दिल को ऐसा ही पाया? बच्चों की ये माँगें आज पूरी होंगी तो फिर आगे चलकर वे इतनी बढ़ेंगी कि उन्हें पूरी करना हमारे बस की बात नहीं होगी! हमारी तनख्वाह पूरी न पड़ेगी। क्या कर्ज़ लेना तुम पसंद करोगी?"

शंकरनाथ ने पद्मा को तो यह जवाब दिया, मगर उसके मन का समाधान न हो सका!

बच्चों ने खाना न खाया, उनकी माँ कैसे खाती? और खुद शंकरनाथ से भी तो खाया नहीं गया—शंकरनाथ सारी रात सोचते बेचैन रहा।

मध्यम वर्ग के हर माँ-बाप के सामने आमदनी और खर्च का मेल बैठाने का एक बहुत बड़ा प्रश्न चिह्न है। बच्चों का
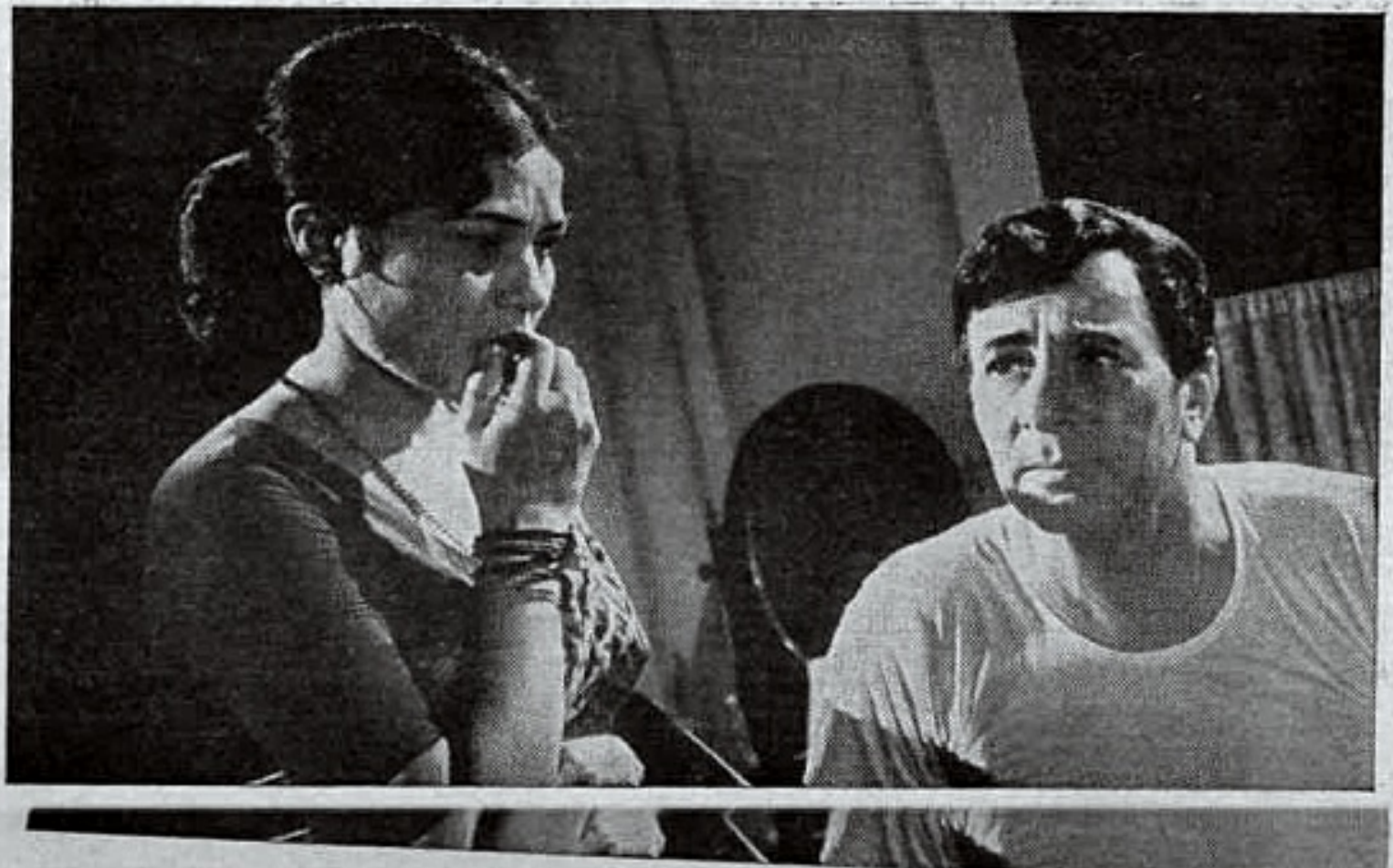
प्यार, पत्नी की फ़रमाइशें, जीवन-मूल्य और सामाजिक नीतियाँ—इन सबके भँवर में फँसी पारिवारिक जीवन-नैया को बेखटके पार लगाने की जिम्मेवारी पतवार थामने वाले पर ही तो है! शंकरनाथ अपनी इस जिम्मेवारी को पूरी तरह पहचानता है! किंतु वह बेचैन था कि उसके बेटे के दिमाग में विद्रोह की यह भावना कैसे पैदा हो गयी! उसे शक था कि यह बाहरी वातावरण का प्रभाव होगा। रवि समझदार है। सोलहवीं साल में प्रवेश कर रहा है। उसे डाँट-डपट कर रास्ते पर लाया नहीं जा सकता और यह उचित भी नहीं। मित्रतापूर्ण व्यवहार से उसे अपने कर्तव्य का बोध कराना होगा—कहा भी है न—"लालयेत् पंच वर्षाणि दश वर्षाणि ताड़येत् प्राप्तेषु षोड़शे वर्षे पुत्र मित्र वदाचरेत्।"

सवेरा हुआ। शंकरनाथ ने रवि को प्यार से निकट बुलाकर कहा—"रवि, तुम समझदार नौजवान हो! घर की हालत तुम से छिपी नहीं है। मैं चाहता हूँ कि आज से तुम घर संभालो! मैं हर महीने अपनी तनख्वाह तुम्हारे हाथ सौंप दूँगा। अपने बस के खर्च और सिगरेट के पैसे तुम से माँग लिया करूँगा। माँ से पूछ कर तुम घर के खर्च का बजट बना लो। महीने के अंत में जो बचेगा, अपने लिए, अपने भाई-बहन के लिए जो चाहे, सो ले लो।"

रवि ने पिता की सलाह खुशी से मान ली। सुलह हुई और भूख हड़ताल समाप्त हुई।

शंकरनाथ ने भी क्या खूब और अनोखा प्रयोग किया। तीनों बच्चे परिवार का बजट बनाने बैठ गये। रवि ने माँ से राशन की सूची माँगी। माँ ने दी और समझाया—"बेटा, यह सब झंझट अपने डैड़ी पर छोड़ दो।" पर रवि ने न माना, उसने जिम्मेवारी जो ले ली थी।

महीने के अंत में बच्चों को मालूम हुआ कि हाथ में कुछ बचा नहीं। रूपा ने सुझाया—"हम नौकरानी को क्यों न हटाये, उसका काम हम ही करेंगे! तीस रुपये बच जायेंगे!" इस बीच राजा अपनी भूल से दस रुपये गँवा बैठा। इन पैसों की पूर्ति के लिए उसने बस के बजाय पैदल जाने का सुझाव दिया। रूपा और रवि ने इस सुझाव का स्वागत किया। वे भी पैदल जाने लगे। बच्चों की यह कर्तव्यपरायणता और त्याग देख पिता बस से कैसे जाते? वह भी पैदल जाने लगा। बच्चों ने अनुभव से स्वावलंबन, परिश्रम और त्याग का पाठ सीखा!

गोपी का पिता सीताराम इससे बहुत प्रभावित हुआ और उसके हृदय में गोपी की आवारागर्दी पर बड़ी मानसिक वेदना हुई। वह अपने बेटे के भविष्य को बनाना चाहता था, मगर वह लाचार था! अपने बच्चे को बिगड़ते देख उसका दिल तिलमिला उठता और वह मन मसोस कर रह जाता!

शंकरनाथ के बच्चों का बजट संतुलित होता दिखाई दिया। उन्हें आशा बंधी। दिवाली आयी, माँ के मन में बच्चों के लिए नये कपड़े खरीदने की इच्छा हुई। पर

बच्चों ने न माना, क्योंकि उनको बजट बिगड़ने का डर जो था! पटाखों के लिए राजा का मन ललचाया, रवि और रूपा ने समझाया–"इसमें रुपये पटाखों के धुएँ के साथ उड़ जायेंगे।" इससे शंकरनाथ को प्रेरणा मिली–सिगरेट के धुएँ में पैसे क्यों फूंके। उसने सिगरेट पीना छोड़ दिया। लेकिन वह जानता था कि छोटा बच्चा राजा का दिल पटाखे के लिए ललचा रहा है। उसने राजा के लिए पटाखे खरीदने की सिफ़ारिश की।

उसी समय शंकरनाथ के भतीजे का परिवार गाज की तरह आ धमका। खर्चा हुआ, और खूब हुआ। मिठाई, टैक्सी और डाक्टर का बिल चुकाने में सारी बचत उड़ गयी। व्यथित हो रवि चिल्ला उठा–"दिवाली जो आयी, हमारा दिवाला निकल गया।"

फिर भी बच्चों ने हिम्मत न हारी। उनके साहस की परीक्षा का समय आया! माँ बीमार पड़ गयी, क्योंकि पद्मा ने परोक्ष रूप से बच्चों के परिश्रम का सारा भार अपने कंधों पर ले लिया था। जी तोड़ मेहनत करते हुए भी उसने आह तक न भरी! उसी का यह नतीजा था। डाक्टर ने रवि को अलग बुलाकर समझाया–"रवि, तुम्हारी माँ को कई दिनों से बुखार था, यह टाइफाइड़ है। फिर भी घबराने की कोई बात नहीं।" रवि के पूछने पर पद्मा ने बताया–"बेटा, इलाज में बेकार खर्च हो जायगा। हमारी इतनी आमदनी भी तो नहीं है?" रवि ने व्याकुल हृदय से कहा–

"माँ, क्या तुम्हारे प्राणों से धन का मूल्य ज्यादा है?"

पद्मा चंगी हो गयी, घर भर में खुशी की लहर दौड़ गयी। पर बजट डंवाडोल हो गया। घाटा पूरा करने की चिंता रवि के दिमाग पर सवार हो गयी। घाटे की पूर्ति के लिए रवि पार्ट टाइम नौकरी की खोज में निकला। वह कई जगह गया, पर कहीं नौकरी न मिली। आखिर संयोग से वह उन्हीं लक्ष्मीदास के पास पहुँचा, जिसके टेंडर की फाइल शंकरनाथ की मेज़ पर थी। लक्ष्मीदास ने पहले रवि को नौकरी देने से इनकार किया, मगर बाद को यह मालूम होने पर कि वह शंकरनाथ का लड़का है, दूसरे दिन आने के लिए कहा।

लक्ष्मीदास यहीं पर न रुका। वह शंकरनाथ पर अपने एहसान का बोझ लादना चाहता था। उसने शंकरनाथ की ओर रुपयों का बण्डल बढ़ाते हुए कहा– "मालूम होता है कि आप कठिनाइयों में हैं। ये रुपये रख लीजिये।"

असली बात प्रकट होने पर शंकरनाथ ने लक्ष्मीदास के मुँह पर रुपये फेंककर कहा– "लक्ष्मीदास, रिश्वत देकर तुम मुझे खरीद नहीं सकते! आइंदा ऐसी धृष्टता करोगे तो तुमको मैं पुलिस के हवाले कर दूँगा।"

उसी तैश में शंकरनाथ घर आया। क्रोध से अंधे हो यह कहते हुए उसने ताबड़ तोड़ रवि को पीटना शुरू किया–"तुमने

मेरी सारी इज्जत, जीवन की कमाई-मिट्टी में मिला दी।"

रवि हक्का-बक्का रहा। उसे अपनी गलती मालूम न हुई। शंकरनाथ से कारण मालूम होने पर उसने कहा–"मैं अपने खेल-कूद का समय बचा कर कुछ कमाना चाहता था, जिससे माँ की बीमारी से हुआ घाटा पूरा हो जाय। मुझे क्या मालूम था कि इसमें लक्ष्मीदास का कोई स्वार्थ भी है।"

पद्मा का दिल पिघल पड़ा। रोते हुए उसने कहा–"बेटा, तुमने परिवार की जिम्मेवारी को इस छोटी-सी उम्र में

पहचान लिया।" इसके बाद उसने प्यार से रवि को छाती से लगा लिया।

शंकरनाथ की मानों आँखें खुलीं। उसने द्रवित होकर रवि से कहा—"बेटा, मुझ से ग़लती हो गयी। मैं तुम्हारे हृदय की गहराई को भाँप न पाया! मुझे माफ़ कर दो।"

*   *   *

साधूराम की आमदनी अपने परिवार की माँगों की पूर्ति के लिए पूरी न पड़ती थी। उसकी रिश्वतखोरी बढ़ती ही गयी। टेण्डरवालों की फ़ाइल रूपयों के पहियों पर चलती थी। एक दिन पुलिस के जाल में वह रिश्वत लेते रंगे हाथों पकड़ा गया। उसके पाप का फल सारे परिवार को भुगतना पड़ा। यहाँ तक कि उसकी बेटी की मंगनी टूट गयी।

साधूराम के जेल जाने पर जमुना का दिल कसक उठा। बेटी की मंगनी के टूटते देख वह फूट-फूट कर रोते हुए बोली—"बेटी, मुझे क्या मालूम था कि तुम्हारे पिता रिश्वत लेते हैं?"

"माँ, ऐसा न कहो, यह बात हम लोगों से छिपी नहीं है। वरना पिताजी हमारी सब माँगों की पूर्ति कैसे करते? तुम्हें मालूम था कि पिताजी को कितनी तनख्वाह मिलती है? हम लोग अपनी इच्छाओं की पूर्ति देख प्रसन्न थे, पर क्या हमने कभी सोचा भी है कि पिताजी को ये सब रुपये कैसे और कहाँ से मिलते हैं? यदि आज पिताजी जेल गये हैं तो मेरे वास्ते, तुम्हारे वास्ते और हम सब के वास्ते जेल गये हैं, माँ! हम सब के वास्ते जेल गये हैं!" बड़ी पुत्री ने कहा।

"बेटी, अगर पहले मुझे मालूम होता कि रिश्वत का ऐसा भयंकर परिणाम होता है तो मैं उनसे कहती कि हमें रूखी-सूखी रोटी पसंद है, मगर बेइज्जत की ये सारी चीजें हमें न चाहिये।" जमुना ने कहा। साधूराम के परिवार का वह उल्लास विषाद में बदल गया।

(कृपया पृष्ठ ६५ देखें)

अमर वाणी

परोपकाराय फलंति वृक्षाः
परोपकाराय वहंति नद्यः
परोपकाराय चरंति गावः
परोपकाराय मिदं शरीरं ॥ १ ॥

[दूसरों के उपयोगार्थ पेड़ फल देते हैं, नदियाँ दूसरों के लिए ही बहती हैं, गायें भी दूसरों के उपकार करने के हेतु चरती हैं, इसी प्रकार यह शरीर भी दूसरों के उपयोग के लिए है ।]

श्रोत्रं श्रुतनैव न कुंडलेन
दानेन पाणि र्नतु कंकणेन
विभाति कायः करुणापराणां
परोपकारेण न चंदनेन...? ॥ २ ॥

[कानों के लिए शास्त्र का श्रवण करना ही अलंकार है न कि कुण्डल । हाथों का अलंकार दान है न कि कंकण । जो दया भाव रखते हैं, उनका अलंकार परोपकार है न कि चन्दन का लेपन ।]

पद्माकरं दिनकरो विकचंकरोति;
चंद्रो विकासयति कैरव चक्रवालं;
नाभ्यर्थितो जलधरोपि जलं ददाति,
सन्तः स्वयं परहिते विहिताभियोगाः ॥ ३ ॥

[सूर्य कमल-सरोवर को विकसित कर देता है, चन्द्रमा कुमुदों को विकसित करता है, बादल सबको पानी देते हैं, इसी प्रकार अच्छे स्वभाव के लोग स्वयं परोपकार में प्रवृत्त हो जाते हैं ।]

खोटी शर्त

एक गाँव में मंगाराम नामक एक गरीब किसान मज़दूर था। वह कड़ी मेहनत के साथ खेती का काम करता, मगर उसके खाने-कपड़े के लिए भी काफ़ी नहीं होता। इसलिए मंगाराम ने सोचा कि शहर जाकर मेहनत करके थोड़ा-बहुत बचाया जाय और उस रक़म से खेत खरीद कर अपनी ज़िंदगी बसर करे।

शहर जाकर मंगाराम ने सब किसी से काम माँगा, लेकिन किसी ने उसे काम नहीं दिया। आखिर निराश हो वह थक गया और एक बनिये की दूकान के सामने बैठ गया। दूकानदार ने मंगाराम को देख पूछा–"तुम कौन हो? क्या चाहते हो?"

मंगाराम ने बताया कि वह काम की खोज में शहर आया है।

दूकानदार को एक नौकर की ज़रूरत थी, पर उसकी शर्तों से तंग आकर जो भी काम पर लगता, उसे छोड़ भाग जाता था। दूकानदार को लगा कि यह गँवार कुछ दिन तक ज़रूर ठहर जायगा।

"देखो, हमारे घर और दूकान का काम करने के लिए एक आदमी की ज़रूरत है। क्या तुम साल भर रहकर यह काम कर सकते हो?" दूकानदार ने मंगाराम से पूछा।

"आप क्या मेहनताना देंगे, साहब?" मंगाराम ने पूछा।

"साल भर के लिए दो सौ रुपये तनख्वाह दूँगा। दोनों जून पत्तल भर खाना दूँगा। मगर मेरी यह शर्त है कि अगर तुम बीच में काम छोड़ दोगे तो तुम्हें एक कौड़ी भी तनख्वाह न दूँगा। यदि मैं तुमको बीच में नौकरी से हटा दूँ तो दुगुनी तनख्वाह देकर भेज दूँगा। तुमको मेरी यह शर्त पसंद हो तो तुरंत

श्यामलाल गर्ग

मंगाराम ने जवाब दिया। दूकानदार यह सोचकर चुप रह गया कि यह बात सब पर प्रकट होने पर उसी का अपमान होगा।

मंगाराम सवेरे उठकर एक बाल्टी पानी भरता, उसी से सारे पौधों को सींच लेता। इसलिए वे पौधे पानी के अभाव में धीरे धीरे सूखने लगे।

"मंगाराम, पेड़-पौधे सूखते जा रहे हैं। क्या तुम इन्हें पानी नहीं देते?" मालिक के पूछने पर मंगाराम ने पौधों के आलवों में गीली मिट्टी दिखा दी।

दूकानदार मंगाराम के काम से तंग आ गया, मगर उसे नौकरी से हटा देने पर चार सौ रुपये तनख्वाह देनी पड़ती थी, यह बात सोचकर दूकानदार चुप रह गया।

इन्हीं दिनों में दूकानदार के साले की शादी करने का निश्चय हुआ। ससुराल से दूकानदार को बुलावा आया। दूकानदार ने अपने साथ मंगाराम को भी ले जाना चाहा। दूकानदार की पत्नी ने अपने पति के लिए बढ़िया पराटे और आलू की सब्जी बनाकर दी और मंगाराम के लिए जौ की रोटी बनाकर दी। दोनों बड़े सवेरे ही रवाना हो गये। दूकानदार घोड़े पर सवार हुआ, मंगाराम पैदल चलने लगा।

पीछे चलनेवाले मंगाराम ने अपने मालिक के पराटे और सब्जी खा डाली। दुपहर तक वे दोनों एक तालाब के पास पहुँचे। दूकानदार हाथ-मुँह धोने जब तालाब के पास गया, तब मंगाराम ने रोटियों की गठरी खोलकर घोड़े के आगे रख दी और वह इधर-उधर ताकने लगा।

दूकानदार ने लौटकर कहा–"अरे मंगाराम, मेरे सारे पराटे घोड़े ने खा डाले, तुम क्या कर रहे थे?"

"सरकार, भूल हो गयी, माफ़ कीजियेगा! मेरी रोटियाँ बची हैं, दोनों बांट कर खा लेंगे।" मंगाराम ने कहा।

"अरे मूर्ख, मैं कैसे खाऊँ?" दूकानदार खीझ पड़ा।

इस पर मंगाराम ने अपने मालिक को समझाया—"सरकार, मैं घोड़े पर पहले आपके ससुराल जाकर आपके भोजन का सारा प्रबंध करके लौटता हूँ। आप धीरे से चलते आइये।"

दूकानदार ने मंगाराम की बात मान ली। मंगाराम ने अपने मालिक के ससुराल पहुँच कर बताया—"हमारे मालिक पीछे चले आ रहे हैं। वे इधर बीमार पड़ गये थे। वैद्य ने उन्हें सिर्फ़ जौ की रोटी खाने को बताया, यही बात बताने के लिए उन्होंने मुझे पहले भेजा है।"

दूकानदार का ससुर यह बात सुनकर बड़ा दुःखी हुआ। इधर मंगाराम ने अपने मालिक के पास लौटकर बताया—"सरकार, मैंने आपके खाने का बढ़िया इंतज़ाम कर रखा है।"

दूकानदार के ससुराल में पहुँचते ही सब कोई उसकी तबीयत का हाल पूछने लगे। पर दूकानदार की समझ में बात नहीं आयी, वह मौन रह गया। जब वह खाने बैठा, तब उसे जौ की रोटी और मूँग की दाल परोसी गयी। पर उसकी समझ में न आया कि क्यों ऐसा किया जा रहा है। वह भूखा था, इसलिए खा डाला। मगर रात को उसके पेट में दर्द होने लगा। रात भर वह परेशान था।

मंगाराम अपने मालिक का कान भरने लगा—"सरकार, कहीं ससुराल में दामाद के साथ ऐसा ही व्यवहार किया जाता
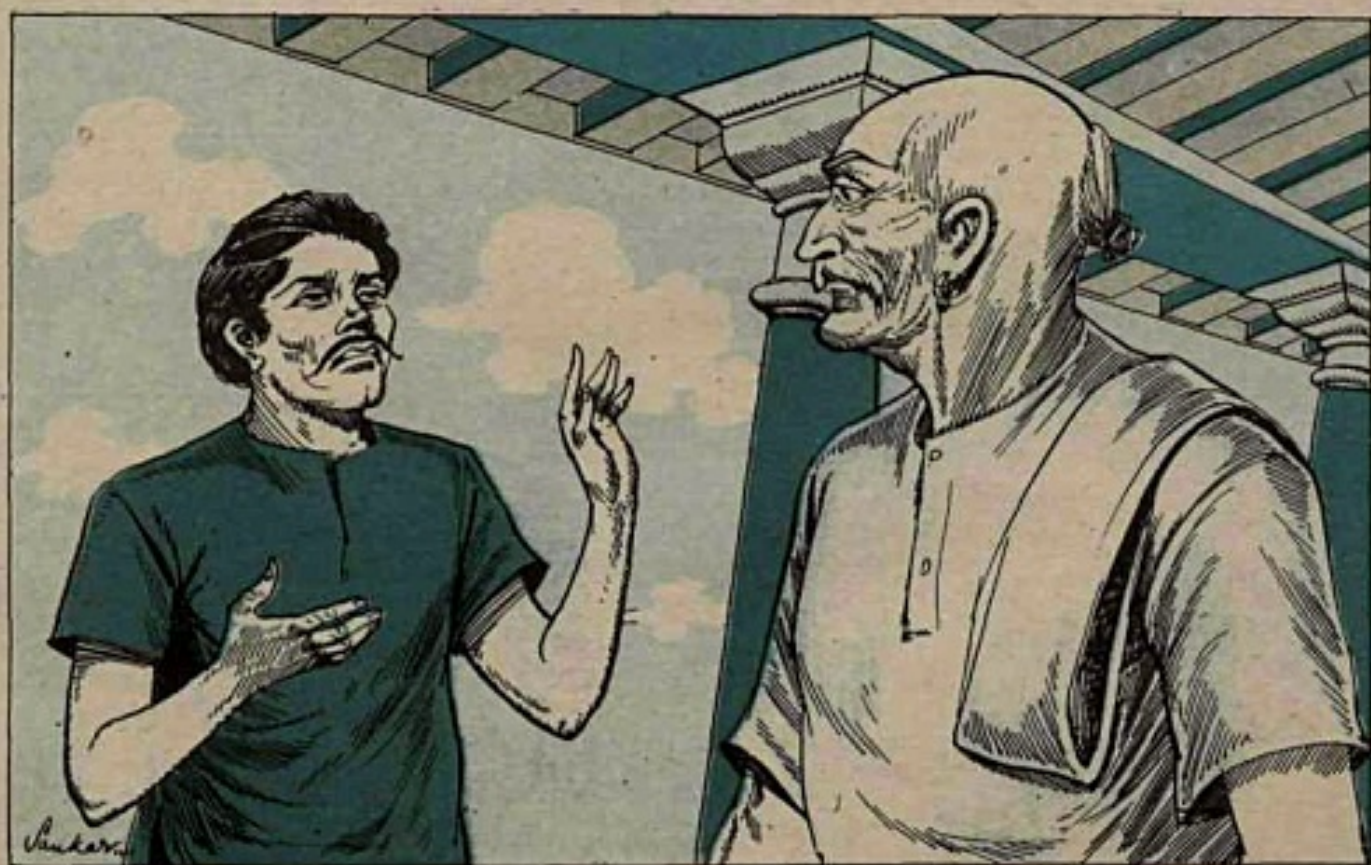
शिलास्थ

[४]

[खड्गवर्मा तथा जीवदत्त को मारने का प्रयत्न करनेवाले व्यक्ति थे—महेन्द्रनगर के राजकुमार तथा उसके दो मित्र। पद्मपुर के राजा और मंत्री की अनुमति से खड्गवर्मा तथा जीवदत्त महेन्द्रनगर के मंत्री के मृत पुत्र और पैर कटे राजकुमार प्रतापचन्द्र को बैलगाड़ी पर लादकर जंगल की ओर निकल पड़े, बाद—]

सूर्योदय से पूर्व ही खड्गवर्मा तथा जीवदत्त वृद्ध मवेशी की झोंपड़ी के निकट के जंगल में पहुँच गये। मवेशी की झोंपड़ी तक सीधे बैल गाड़ी को ले जाना जीवदत्त को कतई पसंद न था। उसका ख्याल था कि ऐसा करने पर नाहक़ बूढ़ा मवेशी तक़लीफ़ों में फँस जायगा।

मवेशी की झोंपड़ी से काफ़ी दूर पर बैलगाड़ी को रुकवाकर जीवदत्त खड्गवर्मा को अपने साथ ले गया। दोनों गाड़ी से उतर कर एक पेड़ के नीचे जा पहुँचे। चारों तरफ़ घना अंधेरा फैला था। दूर पर ख़ूंख्वार जानवर शिकार की खोज में घूमते गर्जन कर रहे थे!

"खड्गवर्मा, हमें इस वक़्त बड़ी सावधानी से यह सोचना उचित होगा कि हमें क्या करना है! हम दोनों महेन्द्र नगर के इन दुष्टों के कारण अनावश्यक

कठिनाइयों में फँस गये। हमें सतर्क रहना है।" जीवदत्त ने कहा।

"नक़ाबवाला वह तीसरा व्यक्ति तुम्हारी असावधानी से ही भाग गया। उसे छोड़कर तुमको चहारदीवारी के पास आना नहीं चाहिये था। उसे भी पकड़ लेते तो हम किसी प्रकार की कठिनाई में फँस नहीं जाते। शायद उसने महेन्द्र नगर जाकर सारी हालत अपने राजा को सुनाई होगी।" खड्गवर्मा ने कहा।

"मेरा भी यही संदेह है। हो सकता है कि पद्मपुर तथा महेन्द्र नगर के राजा अपने बीच वैर को बढ़ाने से बचने के लिए दोनों मिलकर हमें बन्दी बनाने का प्रयत्न करे। हम तो बुरी तरह फँस गये।" जीवदत्त ने कहा।

"जीव, तुमने ख़ूब कहा। चलो, बैलगाड़ी और उसमें पड़े शव और लंगड़े को अपनी क़िस्मत पर छोड़ सवेरा होने के पहले हम दोनों इस राज्य की सीमा पार कर चले जायेंगे।" खड्गवर्मा ने बताया।

"खड्गवर्मा! क्या यह उचित होगा कि मरे हुए व्यक्ति तथा आखिरी साँस लेनेवाले को भी इस भयंकर जंगल में छोड़कर चले जावें..." जीवदत्त ने पूछा।

जीवदत्त अपनी बात पूरी न कर पाया था कि इतने में एक काली आकृति ने उनके निकट आकर धीमी आवाज़ में कहा–"ओह, आप लोग हैं! घंटियों की आवाज़ सुनकर मैं अपनी झोंपड़ी से बाहर आया।"

खड्गवर्मा और जीवदत्त ने उस आकृति की ओर देखा। वह व्यक्ति कोई और न था, वृद्ध मवेशी था। उसे देखते ही दोनों बहुत प्रसन्न हुए।

"दादा, हम दोनों इस वक़्त बड़ी मुसीबत में फँस गये हैं। उस बैलगाड़ी को राजधानी से हाँक ले आनेवाले हम हीं हैं। उसमें एक लाश और एक पैर कटा व्यक्ति है। उनकी इस दुर्दशा का कारण वे ही हैं, हम निर्दोष हैं। हम इस आशा से यहाँ

आये हुए हैं कि सवेरा होने तक उनकी रक्षा करने का भार आपको सौंपकर हम यहाँ से भाग जाय।" जीवदत्त ने कहा।

"उनकी रक्षा का मतलब...क्या खूँख्वार जानवरों से उन्हें बचाने का तो नहीं है न?" इन शब्दों के साथ मवेशी ने बैलगाड़ी की ओर अपना सर घुमाया। इसका कारण यह था कि उस दिशा से एक भालू गुर गुर करता आ रहा था और एक बाघ गरज रहा था।

खड्गवर्मा तथा जीवदत्त ने भी उस ओर देखा। गाड़ी के पीछे से आया भालू और आगे से आया बाघ दोनों इस बार और भयंकर गर्जन कर उठे। वे दोनों लड़ने के प्रयत्न में थे। उनका गर्जन सुनकर बैल बिगड़ उठे और अंधा-धुंध गाड़ी को लेकर जंगल की ओर भागने लगे।

यह सारी घटना पलक मारने के अन्दर हो गयी। खड्गवर्मा और जीवदत्त को भागनेवाले बैलों की घंटियों की आवाज़ तथा भालू और बाघ के लडते करनेवाले गर्जन की ध्वनि सुनाई दे रही थी।

"हमारी समस्या का हल खुद भगवान ने ही कर दिया है, जीवदत्त!" खड्गवर्मा ने उत्साह में आकर कहा।

"ऐसा ही तो दीखता है, मगर बेचारे उस पैर कटे राजकुमार..."

जीवदत्त की बात काटते हुए वृद्ध मवेशी ने कहा—"राजकुमार? किस देश का राजकुमार? असल में बात क्या हुई?

पहले इस बाघ और भालू को यहाँ से भगाना जरूरी है।"

खड्गवर्मा ने पेड़ के नीचे ढूंढकर एक लंबी लकड़ी हाथ में ली और उसे लड़नेवाले भालू तथा बाघ की ओर फेंक दिया। उस लकड़ी की चोट खाकर भालू और बाघ भाग खड़े हुए।

जीवदत्त ने वृद्ध को रात की घटना का सारा समाचार कह सुनाया। वृद्ध क्षणभर मौन रहा, तब बोला–"आप लोगों को तुरंत इस राज्य की सीमा को पारकर भाग जाना उचित होगा। हमारे राजा की अपेक्षा महेन्द्रनगर का राजा बलवान है। उनको अगर यह समाचार मालूम हो जायगा, तो वे हमारे राजा के जरिये आप को बन्दी बनाने का जरूर प्रयत्न करेंगे।"

खड्गवर्मा और जीवदत्त भी पहले से यही शंका कर रहे थे। इसलिए वे वृद्ध को नमस्कार करके फिर कभी मिलने का आश्वासन दे उस अंधेरे में खिसक गये। उन लोगों ने निश्चय किया कि सवेरा होने के पहले वे लोग पद्मपुर से जितनी दूर जा सकेंगे तो उतना ही अच्छा होगा!

मगर महेन्द्रनगर के सेनापति का पुत्र, जो पद्मपुर से बचकर भाग निकला था, रात के तीसरे पहर तक अपने नगर में पहुँचा। उसने अपने पिता को सारी हालत समझा दी। सेनापति को जब यह मालूम हुआ कि राजकुमार तथा मंत्री पुत्र पद्मपुर में मुसीबत में फँसे हैं, तब उसने तुरंत अपने राजा व मंत्री से मिलकर सारी बातें बता दीं।

राजा तथा मंत्री ने सेनापति के पुत्र को बुलाकर उसके मुंह से सारा वृत्तांत सुना। सेनापति के पुत्र ने बताया कि मंत्री के पुत्र को दण्ड की चोट खाकर नीचे गिरते उसने अपनी आँखों से देखा है। साथ ही राजकुमार को चहारदीवारी को लांघते चोट खाकर कराहते उसने सुना है। उस वक़्त पहरेदार ने उसका पीछा किया,

इसलिए वह चहारीदीवार को लांघ कर भाग आया है।

सेनापति के पुत्र ने यह समाचार तो राजा को सुनाया, मगर उसने यह नहीं बताया कि वे तीनों नक़ाब धारण कर गये और पद्मपुर में किस कारण से पहुँचे। उसने झूठ-मूठ यह बताया कि किन्हीं दो क्षत्रिय युवकों ने उनका स्वागत किया तो वे अतिथि गृह में गये थे।

महेन्द्रनगर के राजा और मंत्री को इस बात की बड़ी चिंता हुई कि न मालूम, उनके पुत्र अब तक कैसी मुसीबतों में फँसे हुए हैं। उन्हें इस बात का डर भी सताने लगा कि वे अब तक ज़िंदा हैं या नहीं। राजा और मंत्री ने परस्पर परामर्श करके उसी समय एक दूत के हाथ पद्मपुर के राजा पद्मसेन के नाम पर एक पत्र भेजा।

महेन्द्रनगर का राजदूत घोड़े पर सवार हो सूर्योदय के थोड़ी ही देर बाद पद्मपुर पहुँचा। उसने अपने राजा का वह पत्र राजा पद्मसेन को सौंप दिया। उस पत्र में महेन्द्रनगर के राजा ने लिखा था कि उसके तथा मंत्री-पुत्र को तुरंत महेन्द्रनगर भेजते हुए उनकी हानि करने का प्रयत्न करनेवाले दोनों क्षत्रिय युवकों को भी बन्दी बनवा कर भेजा जाय।

राजा पद्मसेन ने उस पत्र को पढ़कर यह जान लिया कि सेनापति का पुत्र बचकर भाग गया है। पर राजकुमार के पैर कट जाने का तथा मंत्री-पुत्र की मृत्यु का समाचार उसे मालूम नहीं है। पद्मसेन ने तुरंत मंत्री को बुला लाने का आदेश भेजा और महेन्द्र नगर के राजदूत को अतिथिगृह में विश्राम करने भिजवा दिया।

मंत्री सोमदेव राजा के पास आ पहुँचा। उसने पत्र को दो-तीन बार ध्यान से पढ़ा। उस पर गंभीरता के साथ विचार करके एक निर्णय पर पहुँचा, तब बोला—"महाराज, इस पत्र के द्वारा हमें यह

ऐसा करना उनके लिए मृत्यु दण्ड देने के समान न होगा?" पद्मसेन ने कहा।

"इस खतरे से बचाने का एक उपाय है। खड्गवर्मा और जीवदत्त के नाम और उनकी रूप-रेखाओं से परिचित लोग बहुत ही कम हैं। जो लोग परिचित हैं, वे भी हमारे नागरिक और राजकर्मचारी ही हैं। इसलिए हम उन युवकों के नाम बदल कर उस महेन्द्रवर्मा को गलत रास्ते पर ले जाने का प्रयत्न करेंगे। हम लोग यह भी तो नहीं जानते कि इस वक़्त मंत्री-पुत्र की लाश और लंगड़े राजकुमार का क्या हाल है?" मंत्री सोमदेव ने सुझाया।

विदित होता है कि महेन्द्रवर्मा को यहाँ की घटना का समाचार बिलकुल मालूम नहीं है। हम इस आशय का पत्र महेन्द्रवर्मा के नाम भिजवा देंगे कि वे दोनों क्षत्रिय युवक अतिथिगृह से सवेरा होने के पहले कहीं चले गये हैं, रात में जो घटना हुई है, उससे वे बिलकुल अपरिचित हैं। फिर भी हम उन क्षत्रिय युवकों को बन्दी बनाने तथा राजकुमार और मंत्री-पुत्र का भी पता लगाने का अपनी तरफ़ से पूरा प्रयत्न करेंगे।"

"तुम्हारी सलाह ठीक ही है, मगर उन निर्दोष खड्गवर्मा तथा जीवदत्त को ढूंढकर उन्हें महेन्द्रवर्मा के हाथ कैसे सौंपा जाय?

"इन सारी बातों पर सावधानी से सोचकर एक पत्र लिखिये और उसे राजदूत के द्वारा महेन्द्रवर्मा के नाम भिजवा दीजिये। चाहे जो भी हो, मगर खड्गवर्मा और जीवदत्त मुसीबतों में न फँसे। वे दोनों वास्तव में महान वीर हैं। उनमें से कोई एक ज़रूर पद्मावती के सुझाये शिलारथ को हिला सकता है—यदि ऐसा हुआ तो राज्य का सारा भार अपने दामाद पर डालकर मैं विश्राम करूँगा।" राजा पद्मसेन ने कहा।

मंत्री सोमदेव ने एक पत्र लिखा, उसे राजा को दिखाकर उस पर मुहर लगवा दी। तब वह पत्र राजा महेन्द्रवर्मा के दूत

सिद्धहस्त

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने यों कहा–"राजन, अमानवीय कार्यों को साधने के लिए अमानवीय शक्तियों की आवश्यकता होती है। ऐसी शक्तियाँ पानेवाला व्यक्ति बिना किसी प्रकार की कड़ी मेहनत के कोई भी काम साध सकता है। इसके उदाहरण स्वरूप में तुमको गोवर्धन नामक युवक की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा–"एक गाँव में एक धनी व्यक्ति था। उसके घर अधेड़ उम्र के दंपति थे। उनका घर अमीर के घर के अहाते में ही था। उनके लड़के जब बड़े हुए, तब अपनी ज़िंदगी आप बसर करने के ख्याल से दूसरे गाँवों में चले

वेताल कथाएँ

गये। इसलिए वे दोनों पति-पत्नी अकेलेपन से परेशान थे।

उस हालत में उस अधेड़ उम्र के दंपति के एक और लड़का पैदा हुआ। उसी का नाम गोवर्धन था। गोवर्धन जब पैदा हुआ उसी घड़ी में अमीर की पत्नी ने एक लड़की का जन्म दिया। उस लड़की का लीला नाम रखा गया।

एक ही घड़ी में पैदा हुए लीला और गोवर्धन को देख लोग यह सोचने लगे कि उनके जन्म का कोई संबंध जरूर होगा। दोनों साथ साथ बढ़ने लगे। साथ-साथ खेलने लगे। एक दूसरे के प्रति आकर्षण बढ़ता गया। खास कर गोवर्धन लीला के साथ न रहता तो वह खोई-सी रहने लगती।

अमीर के घर एक घोड़ा-गाड़ी थी। शाम के वक़्त लीला उस गाड़ी में घूमने जाया करती थी। गोवर्धन को भी उसके साथ गाड़ी में जाने के लिए हठ करती।

अमीर को जब मालूम हुआ कि उसकी बेटी लीला अपने नौकर के लड़के गोवर्धन के साथ गाड़ी में घूमने जाती है, तब वह बहुत ही नाराज़ हुआ और उसने ताक़ीद की कि गोवर्धन गाड़ी में घूमने नहीं जा सकेगा। परिणाम यह हुआ कि लीला ने भी गाड़ी में घूमना बंद किया।

लीला और गोवर्धन एक ही गुरु के पास पढ़ते थे। पढ़ने जाते समय लीला अपने साथ खाने-पीने की चीज़ें ले जाती और गोवर्धन को बराबर का हिस्सा देती।

एक दिन अमीर की पत्नी ने अपने पति से कहा–"हमारी लीला घर पर जो कुछ मिठाइयाँ खाती हैं, उससे ज्यादा गुरु के पास जाने पर खाती है। मुझे तो बड़ा आश्चर्य होता है।"

अमीर को मालूम हो गया कि लीला मिठाइयों में गोवर्धन को हिस्सा देती है, उसने गोवर्धन के बाप को बुलाकर कहा– "सुनो, तुम्हारा लड़का पढ़-लिखकर क्या करेगा? आखिर उसे खेत का ही काम

के हाथ दिया। दूत ने शाम तक अपने नगर में पहुँच कर अपने राजा के हाथ वह पत्र सौंप दिया।

महेन्द्रवर्मा और उसका मंत्री वह पत्र पढ़कर विस्मय में आ गये। इस बात का उन्हें आश्चर्य होने लगा कि उनके पुत्र और वे दोनों क्षत्रिय आखिर लापता कैसे हो गये? लेकिन उन्हें इस बात की खुशी हुई कि उस पत्र में उन क्षत्रिय युवकों के नाम और उनकी रूपरेखाओं के विवरण भी अंकित थे, जिनके आधार पर वे उन्हें खोज-ढूंढकर पकड़ सकते हैं।

मंत्री सोमदेव ने उस पत्र में खड्गवर्मा तथा जीवदत्त नामों के बदले वीरभद्र और रामभद्र लिखे थे, साथ ही यह भी लिखा था कि वीरभद्र काना है और रामभद्र के बायें हाथ में छे उंगलियाँ हैं। उसमें यह भी लिखा था कि उन युवकों को बन्दी बनाने के लिए पद्मपुर के राजभट सारे देश में खोजने जा रहे हैं, गाँव-गाँव में उनका पता लगाने के लिए ढिंढोरा पिटवाया जा रहा है।

"महामंत्री, अब समझ लो कि वे दोनों दुष्ट क्षत्रिय युवक हमारे हाथों में फँस गये। मगर हमारे पुत्रों का हाल ही मालूम नहीं हो रहा है। क्या तुम्हारा यह विचार है कि वे लोग अपने वेश बदल कर हमारी राजधानी के लिए ही रवाना हुए होंगे?" महेन्द्रवर्मा ने पूछा।

मंत्री वामपाल थोड़ी देर तक मौन रहा, तब बोला–"हमारे पुत्रों में अभी तक बचपना नहीं गया है। हो सकता है कि वे दोनों उन क्षत्रिय युवकों के साथ मिलकर देशाटन पर गये हों। सेनापति के पुत्र की बातों से मुझे यह मालूम नहीं हुआ कि इनके बीच विरोध का क्या कारण है? वह हमारे पुत्रों की अपेक्षा जल्दबाज़ी स्वभाव का है।"

"सच्ची बात धीरे अपने आप मालूम हो जायगी। हमारे राज्य में भी वीरभद्र और रामभद्र को पकड़ने के लिए ढिंढोरा

पिटवाना उचित होगा।" महेन्द्रवर्मा ने सलाह दी। उस दिन शाम को पद्मपुर तथा महेन्द्रनगर के राज्यों के गाँव और शहरों में वीरभद्र तथा रामभद्र की रूपरेखाएँ बताते हुए उन्हें पकड़ने पर भारी इनाम देने के ढिंढोरे पिटवाये गये।

पद्मपुर से बहुत दूर पर स्थित एक गाँव में एक भटियारिन के घर में रहकर खड्गवर्मा तथा जीवदत्त ने यह ढिंढोरा सुना। उन्हें ऐसा लगा कि इस ढिंढोरे के पीछे कोई रहस्य छिपा हुआ है और शायद उन्हें सावधान रहने के लिए राजा पद्मसेन के द्वारा दी जानेवाली यह चेतावनी है।

खड्गवर्मा के मन में यह विचार आया कि तुरंत उस गाँव को छोड़कर जाने में ही भलाई है। पर जीवदत्त ने समझाया कि ऐसा करने से वह शंका का कारण बन जायगा। इसलिए सूर्यास्त के बाद रवाना होकर उस रात को किसी जंगल में बिताया जाय और दूसरे दिन सवेरे किसी न किसी तरह पद्मपुर राज्य की सीमा को पार करने का प्रयत्न किया जाय।

वे दोनों इस प्रकार बात कर ही थे कि दो चौकीदारों ने आकर भटियारिन से पूछा—"तुम्हारे घर जो दो युवक आये, वे कहाँ हैं?" ढिंढोरा सुनकर भटियारिन डर गयी थी। उसने कांपते हुए कहा—"वे दोनों अन्दर हैं। बुला लाती हूँ।" यह कहते वह खड्गवर्मा तथा जीवदत्त के पास आ पहुँची।

चौकीदारों के सवाल सुनकर खड्गवर्मा और जीवदत्त दोनों बाहर आये। चौकीदारों ने उन युवकों की ओर एड़ी से चोटी तक देखकर कहा—"गाँव के मुखिये ने आप दोनों को बुला लाने हमें भेजा है, चलिये।"

"ऐसी बात है, अच्छा, चलो।" जीवदत्त ने उत्तर दिया। आगे आगे चौकीदार और उनके पीछे खड्गवर्मा तथा जीवदत्त कचहरी की ओर बढ़े।

(और है)

देखना है। इसलिए उसकी पढ़ाई बंद करवा दो।"

"सरकार, अभी उसकी उम्र ही क्या है, जब तक वह खेती का काम करने लायक़ न बनेगा, तब तक उसे पढ़ने दीजिये।" गोवर्धन के बाप ने कहा।

"जो कुछ पढ़ा, बस काफ़ी है। कल से मैं उसे गायें चराने के लिए भेज देता हूँ।" अमीर ने कहा। दूसरे दिन से गोवर्धन पढ़ाई बंद करके गायों को चराने मैदान की ओर चला। यह बात मालूम होने पर लीला भी पढ़ने नहीं गयी, बल्कि गोवर्धन के पास पहुँची। दोनों ने एक पेड़ की छाया में बैठकर थोड़ी देर इधर-उधर की बातें कीं, लीला के पास जो मिठाइयाँ थीं, आपस में बाँटकर खाईं।

तीन दिन बीत गये। चौथे दिन गुरु ने अमीर के घर जाकर पूछा—"तीन दिन से लीला पढ़ने नहीं आयी है। वह बीमार तो नहीं हुई?" अमीर को आश्चर्य हुआ। उसने लीला को बुलाकर पूछा तो लीला ने कहा—"गोवर्धन ने पढ़ाई छोड़ दी, इसलिए मैंने भी छोड़ दी।"

अमीर को लगा कि उसकी पुत्री का व्यवहार बेइज्ज़ती करानेवाला है। इसलिए उसने गोवर्धन के बाप को बुलाकर कहा—

"तुम्हारा बेटा अब इस गाँव में नहीं रह सकता। उसे कहीं भेज दो।"

"बड़े लड़के हमको छोड़ कभी के चले गये हैं। इस छोटे से बच्चे को हम से दूर न कीजियेगा।" बूढ़े ने गिड़गिड़ाया।

"अगर तुम अपने लड़के को ही चाहते हो तो तुम सब यहाँ से चले जाओ। तुम लोगों को मैं इस गाँव में जीने न दूंगा।"

गोवर्धन को जब मालिक की ये बातें मालूम हुईं, तब उसने कहा—"पिताजी, मैं यहाँ से चला जाऊँगा। आप मेरे बारे में फ़िक्र न कीजिये।"

जब गोवर्धन लीला से विदा लेने गया, तब लीला बोली—"तुम बड़े होकर लौट

आओगे न? मैं तुम्हारा इंतज़ार करती रहूँगी। बड़े होने पर हम दोनों शादी करेंगे। तुम भूल न जाओ।"

गोवर्धन पैदल चलकर एक दिन शाम को एक बड़े नाले के पास पहुँचा। उस नाले पर एक संकरीला पुल बना था। वह पुल पार करके उस पार जाना ही चाहता था कि तभी एक बूढ़ी ने अपने हाथ की छड़ी उठाकर कहा—"ठहर जाओ, पहले मेरे बतखों को पार करने दो।"

गोवर्धन बूढ़ी के पीछे बतखों के एक ंड को देख रुक गया। पुल संकरीला ा, इसलिए बतख एक के पीछे एक पुल ार करने लगे। बड़ी देर तक वह इंतज़ार करता रहा, पर बतख आ ही रहे थे। एक ओर अंधेरा फैलता जा रहा था, दूसरी ओर वह भूखा था। इसलिए गोवर्धन एक पेड़ से सट कर बैठ गया और सो गया। जब वह जाग पड़ा, तब भी बतख पुल पार कर रहे थे। बतखों के पार करने पर बूढ़ी गोवर्धन के पास आकर बोली—"बतख पुल पार कर चुके हैं। अब तुम जा सकते हो। देरी होते देख तुम खीझ उठे हो न?"

"मेरा तो कोई जल्दी का काम है नहीं। मैं काम की तलाश में जा रहा हूँ।" गोवर्धन ने जवाब दिया।

"विवेकवान व्यक्ति कभी जल्दबाजी नहीं करता, इज्जत रखनेवाले कभी खीझ नहीं उठते। तुम अपना हाथ फैलाओ, तुमको हस्तलाघव नामक विद्या दे देती हूँ।"

गोवर्धन ने अपना दायाँ हाथ बढ़ाया। बूढ़ी ने अपनी छड़ी से हथेली पर जोर से मार दी और कहा—"अब तुम जा सकते हो! तुम जो भी काम करोगे, वह सफल होगा!" ये शब्द कहकर बूढ़ी कहीं चली गयी।

"यह बूढ़ी बड़ी खराब है!" गोवर्धन अपने मन में गुनगुनाते पुल को पार कर शाम तक एक नगर में जा पहुँचा। उसन

एक सुनार के घर के सामने खड़े हो पूछा—"क्या आप मुझे काम सिखा सकते हैं?"

"अच्छी बात है। मैं सिखाऊँगा। तुम मन लगाकर काम करोगे तो कुछ बन सकते हो।" सुनार ने कहा। इसके बाद गोवर्धन को एक कमरे में ले जाकर वहाँ पर काम करनेवालों को दिखाते हुए बोला—"तुम एक साल तक यह काम सीखोगे तो इन लोगों की तरह तुम भी कुशल बन सकोगे।" फिर एक दूसरे कमरे में ले जाकर समझाया—"इनके बराबर तुम काम करना चाहोगे तो तुम्हें कम से कम चार साल लगेंगे।" तब सुनार गोवर्धन को अपने कमरे में ले जाकर बोला—"इस कमरे में मैं काम करता हूँ। मैं इस वक़्त राजा के लिए एक किरीट बना रहा हूँ। तुम अपनी सारी ज़िंदगी काम सीखोगे तब भी यह काम शायद तुम न कर सकोगे। इस महानगर में मेरे बराबर काम करनेवाला दूसरा कोई नहीं है। इसीलिए राजा ने मुझे यह काम सौंप दिया है।"

"यह काम तो मैं भी कर सकता हूँ।" अध बने किरीट को उलट-पलट कर देखते हुए गोवर्धन ने कहा।

सुनार एक दम नाराज़ हो उठा।

"अरे तुम मेरे पास काम सीखने आये हो, और मेरे बराबर काम करने की डींग मारते हो? करो तो सही, मैं भी देखूं! जब तक तुम यह किरीट पूरा न करोगे तब तक मैं तुमको इस

कमरे से बाहर जाने न दूंगा।" यह कहकर सोनार दर्वाज़े पर कुंड़ी लगाकर बाहर चला गया।

दूसरे दिन सुनार ने दर्वाजा खोल कमरे में प्रवेश किया तो देखता क्या है, राजा का किरीट एक दम बनकर तैयार है, रत्नों से जड़ित हो वह चमक रहा है। सुनार ने चकित हो उस किरीट को गोवर्धन के हाथ से छीन लिया और सावधानी से उसकी जाँच की। कारीगरी में कोई ऐब न थी। सुनार की समझ में न आया कि जिस काम को वह चार सप्ताह में करता है, उसे एक रात में काम सीखनेवाला यह युवक कैसे पूरा कर सका।

"बेटा, मैं नहीं जानता था कि तुम ऐसे होशियार हो! तुम यहीं रहकर काम करो; कहीं मत जाओ। मेरी कमाई में से तुम्हारा हिस्सा बराबर दूंगा।" सुनार ने कहा।

गोवर्धन ने मान लिया, मगर सुनार उसके साथ धोखा देने लगा। राजा ने किरीट के लिए जो पुरस्कार दिया, उसमें थोड़ा-सा ही हिस्सा गोवर्धन को प्राप्त हुआ। फिर भी गोवर्धन को लगा कि सुनार ने ज्यादा ही धन उसे दिया है। उसने उस धन को छिपा लिया। मगर जब गोवर्धन को यह साफ़ मालूम हो गया कि उसे सुनार धोखा दे रहा है, तब वहाँ रहने को उसका मन न लगा।

गोवर्धन सुनार के घर से निकल कर सारे नगर में घूमते आखिर एक शिल्पी के यहाँ पहुँचा। शिल्पी ने गोवर्धन को काम सिखाने को मान लिया। वह एक मंदिर के लिए पूजा की मूर्तियाँ गढ़ रहा था। उन्हें दिखाकर बोला—"राजकुमारी बीमार पड़ गयी है। कहते हैं कि मंदिर के बनाने पर राजकुमारी की बीमारी जाती रहेगी। अब वह मंदिर बनकर तैयार है। राजा ने पूजा की मूर्तियों को तैयार करने का मुझे आदेश दिया है।"

"इन मूर्तियों को तो मैं भी गढ़ सकता हूँ।" गोवर्धन ने कहा।

शिल्पी को गोवर्धन पर बड़ा क्रोध आया–"तुम अपने को बड़े कलाकार मानते हो, तो शाम तक इन्हें पूरा करो, मैं भी तो देखूँ ।" यह कहकर शिल्पी चला गया ।

गोवर्धन छेनी व हथौड़ी लेकर एक एक मूर्ति को गढ़ने लगा । अचानक देवी की मूर्ति बोल उठी–"बेटा, तुम सिद्धहस्त हो ! मैं तुमको वरदान देती हूँ कि तुम अपनी छेनी से मरे हुए लोगों के पैर में छेद बनाओगे तो वे जीवित हो उठेंगे ।" ये बातें कहकर वह देवी फिर मूर्ति बन गयी ।

शाम को शिल्पी ने लौटकर देखा तो सारी मूर्तियाँ बनकर तैयार थीं । शिल्पी ने गोवर्धन के हाथ पकड़ कर कहा–"बेटा, तुम साधारण व्यक्ति नहीं हो, मय और विश्वकर्मा के अंश में पैदा हुए मालूम होते हो ! तुम मेरे ही पास रहकर काम करते हुए मेरी कमाई में से अपना हिस्सा लिया करो ।"

गोवर्धन ने मान लिया ।

मूर्तियों को नये मंदिर में रखकर राज पुरोहित ने स्वयं उनको प्रतिष्ठापित किया । लेकिन राजकुमारी की बीमारी दूर नहीं हुई, बल्कि वह मर गयी ।

राजा को दुःख के साथ क्रोध भी आया । उसने पुरोहित को बुलाकर कहा–"राजकुमारी का देहांत क्यों हुआ ? तुम सब ने मुझे धोखा दिया है । मंदिर बनाने की सलाह देनेवालों के सर मैं कटवा दूँगा ।"
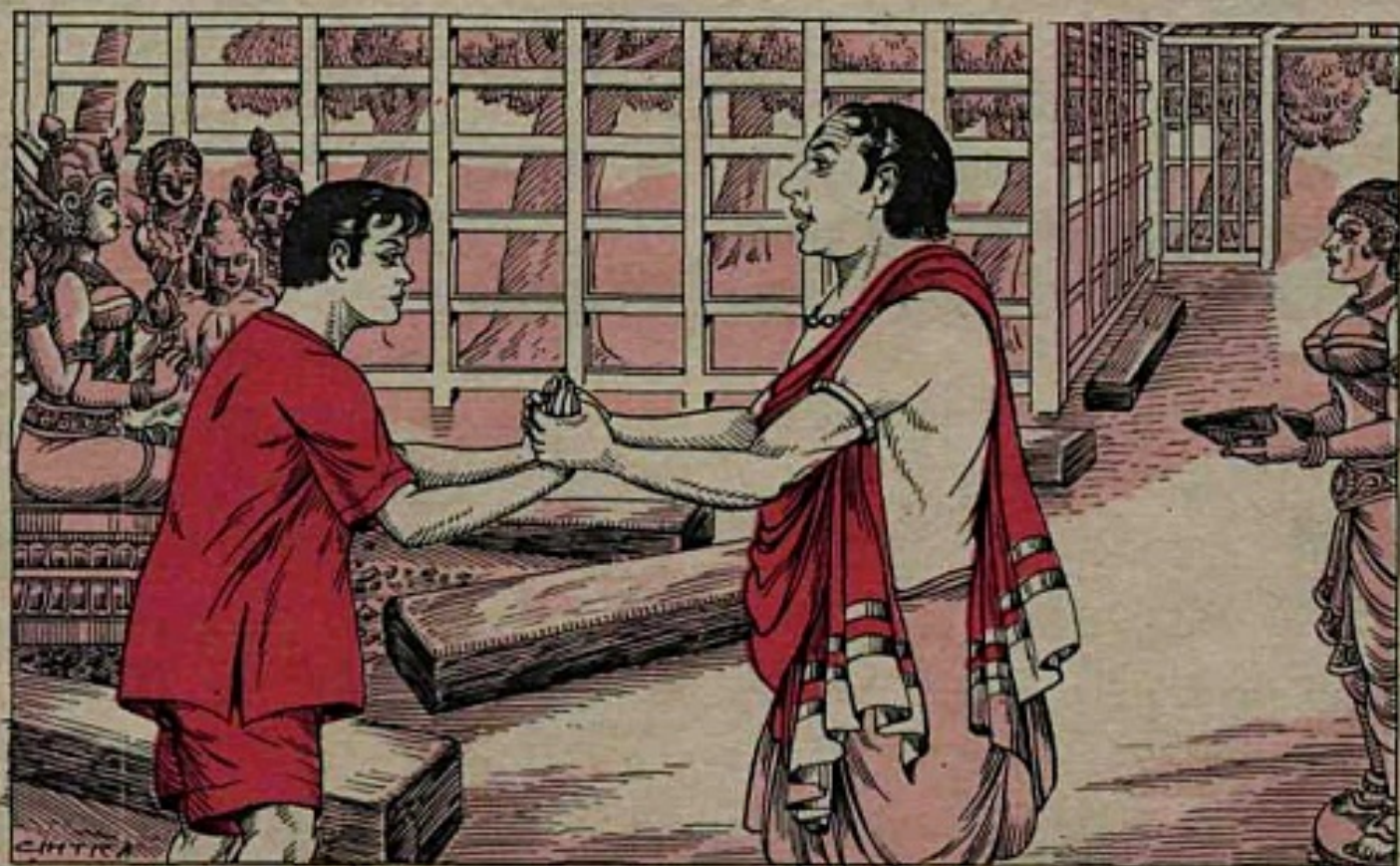
राजपुरोहित घबरा कर बोला—"महाराज! शिल्पी ने जो मूर्ति गढ़ी, उसी में कोई दोष होगा।"

राजभट तुरंत शिल्पी को पकड़ लाये। शिल्पी डर के मारे कांपते हुए बोला—"महाराज, मूर्तियों में अगर कोई दोष हो तो मैं उसका जिम्मेवार नहीं हूँ। इनको गढ़नेवाला गोवर्धन है।"

राजा ने अपने भटों को भेजकर गोवर्धन को बुला भेजा। गोवर्धन ने राजा से निवेदन किया—"महाराज, मूर्तियाँ मैंने गढ़ी हैं, शिल्पी ने नहीं। वास्तव में मूर्तियों में कोई दोष नहीं है। मेरा संदेह है कि राजकुमारी की मृत्यु नहीं हुई है। क्या क्षण भर मुझे राजकुमारी को देखने की आज्ञा दे सकते हैं?"

राजा ने गोवर्धन को राजकुमारी के शववाले कमरे में भेजा। गोवर्धन ने वहाँ के लोगों को बाहर भेजकर राजकुमारी के पैर में छेनी से एक छेद बनाया। तुरंत राजकुमारी जीवित हो उठ बैठी और गोवर्धन के साथ राजा के सामने आ पहुँची।

राजा ने गोवर्धन के साथ आलिंगन किया और अनेक पुरस्कार देकर उसका सम्मान किया।

गोवर्धन इस प्रकार बड़ा धनी बना। इस बीच वह जवान भी बन चुका था। उसके मन में यह इच्छा पैदा हुई कि अपने गाँव में जाकर लीला के साथ विवाह करके आराम से दिन बितावे। राजा ने उसे पुरस्कारों के साथ जो घोड़ा दिया था, उस पर अपने सारे धन को लादकर वह अपने गाँव की ओर चल पड़ा।

गोवर्धन जब अपने गाँव के निकट पहुँचा तब उसे एक सफ़ेद इमारत दिखाई दी। उसके चारों तरफ़ एक भी द्वार न था। इसके पहले वहाँ पर वह इमारत भी न थी। वह खड़े हो सोच ही रहा था कि बूढ़ी हँसते हुए वहाँ आ धमकी और बोली—"ओह, तुम हो? अरे तुम राजा बन गये हो।"

"नानीजी, यह सब तुम्हारी मेहरबानी है। इसमें तुम्हारा भी हिस्सा है।" इन शब्दों के साथ गोवर्धन ने धन की गठरियाँ दिखायीं।

"मुझे धन की क्या ज़रूरत है, बेटा? मगर तुम गाँव में जाओगे तो भी खुश न होगे, तुम्हारे माँ-बाप कभी के मर गये हैं। तुम जिस लड़की को देखना चाहते हो, वह भी मर गयी है। उसके माँ-बाप ने ज़बर्दस्ती उसकी शादी करनी चाही। उसने आत्महत्या करते हुए यह चिट्ठी लिख दी थी कि उसके मरने के बाद इस बगीचे के बीच उसकी समाधि बना दी जाय! उसके माँ-बाप ने उसे एक पेटी में रखकर उसकी समाधि की है। यह उसी की समाधि है।" बूढ़ी ने समझाया।

"मैं लीला को जिलाऊँगा। मगर भीतर जाने का कोई रास्ता नहीं है, नानी!" गोवर्धन ने कहा।

बूढ़ी ने अपनी छड़ी से समाधि की दीवार पर मारा। तुरंत एक तरफ़ की दीवार टूट कर गिर पड़ी। भीतर एक पेटी थी। उसे खोलकर देखने पर लीला इस तरह दिखाई दी, मानों सो रही हो! गोवर्धन ने छेनी लेकर लीला के पैर में छेद बनाया। लीला इस तरह उठ बैठी, मानों वह नींद से जाग पड़ी हो। वह

गोवर्धन की ओर अचरज के साथ देखने लगी।

"लीला, क्या तुमने मुझे नहीं पहचाना? मैं गोवर्धन हूँ!" गोवर्धन ने कहा। लीला का चेहरा खुशी के मारे खिल उठा। गोवर्धन ने अपने हाथ की छेनी फेंक कर लीला से गले लगाया।

"मुझे यक़ीन था कि तुम लौट आओगे। मेरे माता-पिता ने ज़बर्दस्ती मेरा विवाह करना चाहा। इसलिए मैंने मर जाने के समान दिखा सकनेवाली दवा खाकर इस तरह का इंतज़ाम करवा लिया कि बड़ी सावधानी से मेरी समाधि करे। मैं सचमुच मरी नहीं हूँ।" लीला ने कहा।

दोनों उस इमारत से बाहर आये।

"तुमको जीवित देख तुम्हारे माँ-बाप खुश हो जायेंगे। इसलिए चलो, हम तुम्हारे घर चलेंगे।" गोवर्धन ने कहा।

"मैं फिर अपने घर जाना नहीं चाहती। चलो, हम और कहीं जाकर आराम से अपने दिन काटेंगे।" लीला ने कहा।

"मेरी छेनी समाधि में रह गयी। ठहरो, मैं उसे ले आता हूँ।" इन शब्दों के साथ गोवर्धन समाधि के पास पहुँचा। मगर समाधि की दीवार जो गिरी थी, वह फिर खड़ी-सी मालूम हुई। भीतर जाने का रास्ता भी बंद था। बूढ़ी का भी कहीं पता न था। गोवर्धन ने सोचा कि अब उसे अपनी छेनी नहीं मिल सकती, वह लीला को भी घोड़े पर बिठाकर नगर की ओर चल पड़ा और वहाँ सुखपूर्वक अपने दिन बिताने लगा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा— "राजन, लीला ने जिंदा होने पर अपने माँ-बाप को देखने से क्यों इनकार किया? इसका समाधान जानते हुए भी न दोगे, तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमार्क ने उत्तर दिया— "लीला बड़ी दृढ़ लगनवाली मालूम होती है, इसलिए वह बचपन से ही अपने पिता का विरोध करते गोवर्धन के सुख-दुखों में भाग लेती आयी है। उसके साथ विवाह करने के ख्याल से ही आत्महत्या करने का अभिनय किया और अपने माता-पिता को दुःख देने का निश्चय किया। इस वक़्त गोवर्धन उन लोगों से भी ज्यादा संपन्न है, इसलिए उसके माँ-बाप गोवर्धन के साथ उसकी शादी करने को मान जायेंगे। मगर लीला को उनकी स्वीकृति की ज़रूरत न थी। उनके दुःख को दूर कर उन्हें प्रसन्न करने का विचार लीला के मन में नहीं है। यही कारण है कि उसने अपने घर लौटने से इनकार किया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

तेली का तोता

एक तेली के यहाँ एक सुंदर तोता था। वह तेल की दूकान पर लटकनेवाले पिंजड़े में बंद था।

एक दिन दूकान में कोई बिलाव आया। उसे देख डरकर तोता पिंजड़े में उछल-कूद करने लगा। इसलिए पिंजड़ा टूट कर नीचे गिरा। तेल की हँडी टूट गयी और चारों तरफ़ तेल फैल गया।

तेली को तोते पर गुस्सा आया। उसने तोते के सर पर के सारे बाल उखाड़ कर उसे गंजा सर बनाया। तोते ने रूटकर मालिक से बातें करना बंद किया। अपनी करनी पर तेली भी पछताने लगा।

दो सप्ताह बाद एक गंजा सरवाला तेल ख़रीदने उस दूकान पर आया। तोता उसे देख ज़ोर से हँस पड़ा।

"तुम बहुत खुश मालूम होते हो? क्या बात है? आख़िर इसका कोई कारण भी तो हो? तुम सही कारण न बताओगे तो कठिन दण्ड दूँगा। बताओ?" मालिक ने तोते से पूछा।

"लगता है कि इस आदमी का मालिक भी तेली है। क्यों कि इसके सर पर एक भी बाल नहीं है।" तोते ने जवाब दिया।

अपनापन

एक गाँव में रामदास और सोमदास नामक दो घनिष्ट मित्र थे। रामदास व्यापार करके बहुत बड़ा धनी बन गया। पर सोमदास देशाटन करके बड़ा पंडित बना। सोमदास की कमाई रामदास की कमाई में से दसवाँ हिस्सा तक न थी, फिर भी उसके परिवार के लिए खाने-पीने को पर्याप्त थी। आमदनी में अंतर होने पर भी उनकी मैत्री में कोई फ़रक़ नहीं पड़ा। सोमदास के पांडित्य पर रामदास मुग्ध था। रामदास की व्यापारिक कुशलता देख सोमदास मन ही मन बहुत ही प्रसन्न था। इस तरह दोनों मित्र परस्पर एक दूसरे की निपुणता को देख प्रसन्न रहते थे।

कुछ समय बाद रामदास के एक पुत्र हुआ। कुछ महीने और बीतने पर सोमदास की एक पुत्री हुई। रामदास के पुत्र का नाम माधव था और सोमदास की पुत्री का नाम राधा।

राधा के पैदा होने के कुछ दिन बाद सोमदास की पत्नी का देहांत हो गया। इसलिए रामदास और उसकी पत्नी उस बच्ची को अपने घर ले जाकर बड़े ही लाड़-प्यार से पालने लगे। लोग समझने लगे कि राधा रामदास की सगी पुत्री है और राधा का भी यही विचार था कि रामदास उसका असली पिता है।

कुछ समय बाद रामदास के मन में एक विचार आया। अमीर का बेटा होने और अपने पिता के अशिक्षित होने की वजह से माधव मूर्ख बनता जा रहा था। इसलिए रामदास ने अपने लड़के को सोमदास के हाथ सौंपते हुए पूछा—"मेरे पुत्र का पालन करते हुए तुम इसको शिक्षित बनाओ।"

प्रकाश सक्सेना

इस प्रकार रामदास और सोमदास ने अपने बच्चों को बदल लिया। राधा एक मामूली गृहस्थ की पुत्री होने पर भी धनी रामदास के घर में आराम से पलने लगी।

माधव यों तो स्वभाव से अक़्लमंद था। वह एक मामूली गृहस्थ के घर में रहते सुखों के पीछे न पड़कर सोमदास की संगति में ज्ञानार्जन करने लगा। ज्यों ज्यों वह बड़ा होने लगा, त्यों त्यों वह सोमदास को ही अपना पिता मानता गया और बुढ़ापे में उसको और सुखी बनाने के ख्याल से ऊँची शिक्षा पाने का प्रयत्न करने लगा। इस प्रकार बड़ी लगन से उसने सभी शास्त्रों का अध्ययन किया और एक बड़े विद्वान के रूप में मशहूर हुआ।

अपने पुत्र को योग्य विद्वान बने देख रामदास और उसकी पत्नी बहुत ही खुश हुए। माधव को पंडित बनाने में अपने प्रयत्न को सफल देख सोमदास भी प्रसन्न था।

रामदास और सोमदास पहले से ही घनिष्ट मित्र थे, इसलिए उन दोनों परिवारों के बीच बराबर आना-जाना चलता रहा। राधा और माधव भी बचपन से ही मैत्री के साथ रहते थे।

माधव राधा को बहुत चाहता था। उम्र के बढ़ने के साथ राधा के प्रति माधव के मन में जो आकर्षण था, वह प्रेम के रूप में परिणत हो गया।

मगर राधा के मन में ऐसा कोई परिणाम नहीं हुआ। उसके मन में एक धनी की

पुत्री होने का अहंकार था। रामदास के साथ जब भी वह सोमनाथ के घर जाती, तब उसका मन अपने घर को लौटने को लालचाता था। सोमदास और माधव के प्रति उसके मन में प्रेमभाव था, मगर उसकी गरीबी के प्रति राधा के मन में हल्का भाव था।

जब राधा और माधव बड़े हुए, तब रामदास और सोमदास ने उन दोनों का विवाह करने तथा उनके जन्मों का रहस्य बताने का निर्णय किया।

सोमदास ने माधव से पूछा—"बेटा, राधा के साथ में तुम्हारा विवाह करना चाहता हूँ। तुम्हारा क्या विचार है?"

"मैंने राधा को छोड़ किसी और के साथ शादी न करने का कभी निश्चय कर लिया है, पिताजी!" माधव ने स्पष्ट शब्दों में जवाब दिया।

रामदास ने भी राधा से पूछा—"बेटी, तुम्हारी शादी मैं माधव के साथ करना चाहता हूँ। तुम्हें कोई आपत्ति नहीं है न?"

"माधव तो अच्छा आदमी है, पिताजी! मगर वे लोग ग़रीब हैं न?" राधा ने जवाब दिया।

राधा के मुंह से यह बात सुन कर रामदास चौंक पड़ा। उसने तुरंत राधा से कहा—"बेटी, माधव ग़रीब नहीं, वह मेरा बेटा है। मेरी जमीन-जायदाद का वह वारिस है। तुम वास्तव में सोमदास की पुत्री हो। तुम्हारी माँ तुम्हारे बचपन में ही मर गयी। इसलिए तुमको अपने घर लाकर हमने पाल-पोस कर बड़ा किया है। माधव धन पाकर बिगड़ जायगा, यह सोच कर हमने उसे तुम्हारे पिता के घर रखा। अब वह योग्य बन गया है। इसलिए तुम उसके साथ शादी करने में संकोच मत करो।"

रामदास की बातें सुनने पर राधा की आँखें खुल गयीं। वह अपनी बातों पर पछताने भी लगी। इसके बाद राधा और माधव का विवाह ठाठ से संपन्न हुआ।

कमजोर "अ"

एक गाँव में एक ब्राह्मण था। उसके एक ही लड़का था, नाम रामशास्त्री था। वह कुछ दिन पढ़ने के लिए पाठशाला में गया। तख्ती पर लिखे गये 'अ, आ' अक्षर पढ़ा, फिर पढ़ाई छोड़ दी।

बड़े होने पर रामशास्त्री की शादी हो गयी। दशहरे पर वह ससुराल में गया। जब वह ससुराल पहुँचा, तब तक उसका ससुर किसी जरूरी काम से दूसरे गाँव में गया, वहाँ से चिट्ठी लिखी कि फलाना दिन मैं घर लौटनेवाला हूँ।

सास ने वह चिट्ठी रामशास्त्री के हाथ दी, पढ़कर समाचार सुनाने का आग्रह किया। रामशास्त्री ने चिट्ठी हाथ में ली। वह उसे पढ़ न पाया, उल्टे रोने लगा। दामाद को रोते देख घर भर के लोगों ने सोचा कि कोई दुर्घटना का समाचार है, इसलिए वे भी रोने लगे। सबको रोते देख अड़ोस-पड़ोस के लोग वहाँ पर जमा हुए। एक ने उस चिट्ठी को पढ़कर बताया—"अरे इस चिट्ठी में तो कोई दुर्घटना का समाचार नहीं है। पंडित जी ने यही लिखा है कि वे कल तक घर लौटनेवाले हैं। तुम लोग रोते क्यों हो?"

"जब मैं पढ़ता था तब 'अ' बहुत ही बड़ा था, इतना बड़ा था कि मैं बड़ी आसानी से पढ़ पाता था और उसे मैं खूब पहचानता हूँ, लेकिन इस चिट्ठी में तो वह कमज़ोर हो गया। इसलिए मैं रो पड़ा।" रामशास्त्री ने कहा।

सास को मालूम हो गया कि उसका दामाद तो काला अक्षर भैंस बराबर है।

होनहार

नार्वे देश में एक अमीर था। उसके दो पुत्र थे। समुद्र के बीच एक टापू था, जो अमीर का था। वह टापू मछलियों का शिकार करने के लिए अत्यंत अनुकूल था। गरमी के मौसम में अमीर के लड़के उस टापू में जाकर मछलियों का शिकार करते थे। अमीर ने अपने बेटों के ठहरने के लिए टापू पर एक मकान भी बनवाया। अकसर अमीर के लड़के उस टापू में मछलियों का शिकार करने जाया करते थे।

अमीर के बेटों में बड़ा लड़का गंभीर स्वभाव का था। वह किसी से दिल खोलकर बात नहीं करता था। दूसरा लड़का बड़े से भिन्न स्वभाव का था। वह हमेशा साहस के काम करता था। उसके साहस से कभी नुक़सान भी पहुंचता तो वह उसकी परवाह नहीं करता था। वह अपने को बड़ा होनहार मानता था।

अमीर के मरने पर ज़मीन-जायदाद के साथ टापू पर भी दोनों का अधिकार हुआ। पर उन दोनों ने ज़मीन-जायदाद आपस में नहीं बाँटी। वे दोनों भाई गरमी के हर मौसम में नाव पर टापू में पहुँच जाते, मछलियों का शिकार करके बरसात के मौसम में घर लौट आते थे। एक अफ़वाह थी कि जाड़े के मौसम में नाटे जाति के लोग उस टापू का उपयोग करते हैं। पर किसी ने उन लोगों को नहीं देखा था। वे लोग मनुष्यों से मिलते न थे, मगर मनुष्य भी उन लोगों से डरते थे।

एक वर्ष दोनों भाई टापू पर मछलियों का शिकार करने गये और वहाँ पर अपना थोड़ा सामान भूल आये। उस सामान को

नार्वे की लोक-कथा

लाने दोनों भाई कुछ दिन बाद फिर नाव पर टापू में पहुँचे। वे घर लौटना ही चाहते थे, सूर्यास्त हो गया।

बड़े भाई ने छोटे भाई से कहा–"हम आज रात को इसी टापू में रह जायेंगे! आंधी होने के आसरे दिखाई देते हैं। इसलिए कल सुबह निकलेंगे।"

"आंधी बिलकुल न होगी, चलो, अभी चले चलेंगे।" छोटे भाई ने कहा।

"मैं बहुत ही थक गया हूँ। सफ़र नहीं कर सकता। मेरी बात मान जाओ। जल्दबाज़ी न करो।" बड़े भाई ने स्पष्ट शब्दों में कहा।

उस रात को दोनों भाई टापू के उस मकान में रह गये। सवेरे उठकर छोटे भाई ने देखा। उसके बड़े भाई का कहीं पता न था। उनकी नाव भी न थी। मगर खाने-पीने की चीज़ें, एक बंदूक़ और कई और अनेक चीज़ें रह गयी थीं।

बड़ा भाई शाम तक लौट आयगा, यह सोचकर छोटे भाई ने खाना बनाकर भर पेट खा लिया।

दिन और सप्ताह बीतने लगे, पर बड़े भाई का पता न था। छोटे ने समझ लिया कि उसके हिस्से की जमीन-जायदाद हड़पने के ख्याल से उसका बड़ा भाई उसे इस निर्जन टापू में छोड़ गया है। यह बात सच भी थी। बड़े ने किनारे पर पहुँच कर नाव को पानी में डूबो दिया और गाँव के लोगों से बताया कि उसका

भाई समुद्र में डूबकर मर गया है। उसने उसे बचाने की बड़ी कोशिश की, मगर कोई फ़ायदा न रहा।

मगर छोटा भाई दुःखी नहीं हुआ। उसने लकड़ियों की मदद से एक डोंगी बनायी, उसकी सहायता से मछलियाँ पकड़ लीं। बंदूक़ से चिड़ियों को मारकर अपना पेट भरते उसी टापू में रहने लगा। कई दिन बीत गये।

जाड़े का मौसम आया। छोटे ने सोचा कि नाटे लोग इस टापू में आ जायें तो समय कट सकता है।
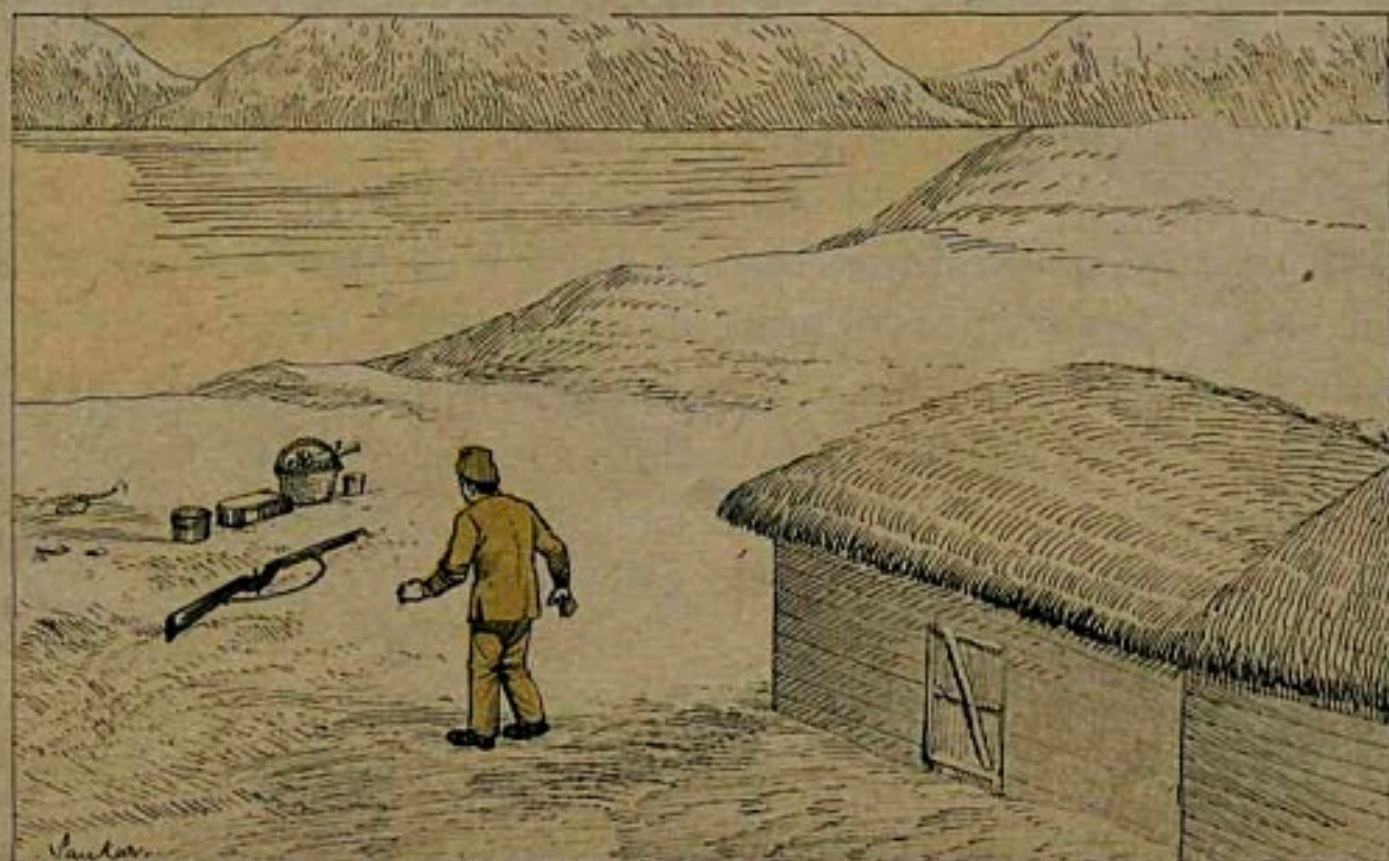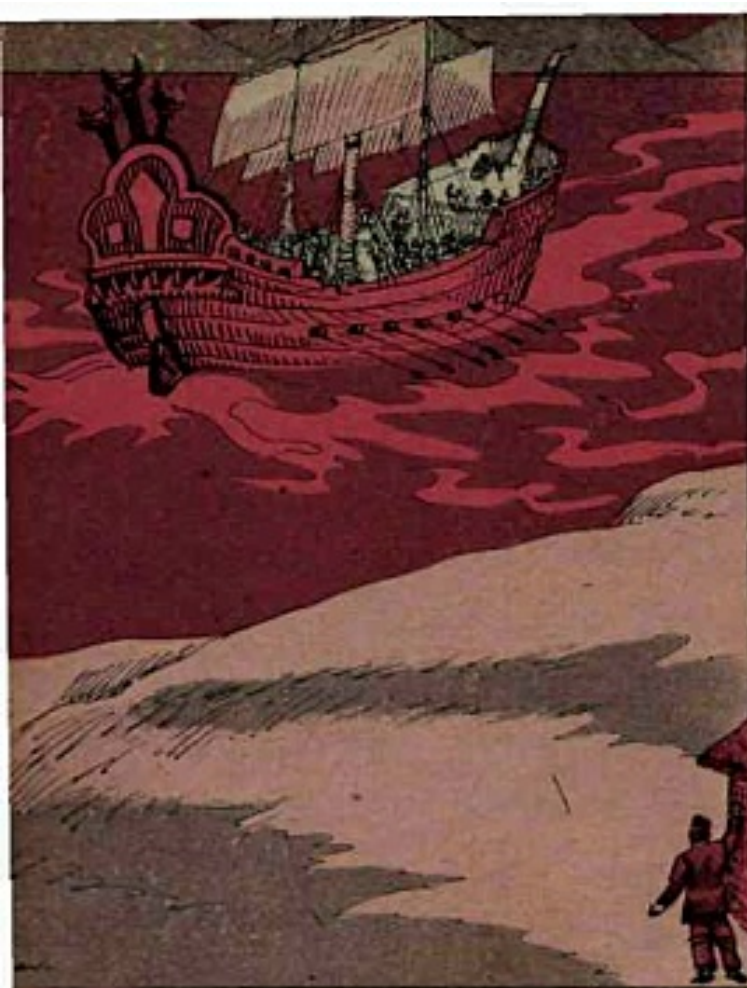
एक दिन उसे समुद्र पर से वाद्यों की आवाज़ सुनायी दी। उसने देखा कि दूर पर रोशनी भी फैली हुई है। वह रोशनी एक नाव पर से आ रही थी। ऐसी नाव को उसने कभी न देखा था। उसके पाल चौकोरे तथा रेशमी वस्त्रों से बनाये मालूम होते थे। नाव भर में नाटे लोग नीले रंग के कपड़े पहने हुए थे। पतवार के पास दुलहिन के वेष में एक जवान औरत खड़ी थी। वह देखने में महारानी जैसी लगती थी। वह नाटी न थी, साधारण क़द की थी। छोटे भाई ने मन में सोचा कि ऐसी सुंदर लड़की को उसने कहीं न देखा है। वह नाटी जाति की औरत भी मालूम नहीं होती थी।

अपनी ओर नाव को आते देख छोटा झट घर के भीतर दौड़ गया, दीवार पर लटकनेवाली बंदूक़ लेकर अटारी पर जा लेटा। नीचे का सारा दृश्य उसे दिखाई दे रहा था।

जल्द ही वे सब नाटे लोग घर के भीतर आ गये। उनकी संख्या अपार थी। नाटों ने घर को खूब सजा कर राजमहल जैसा बनाया। सब जगह सोने व चाँदी के बर्तन पड़े थे। उस सजावट को देख छोटा भाई एकदम दंग रह गया।

नाटे लोगों ने पहले भोजन किया, तब वे प्रसन्नता पूर्वक नृत्य करने लगे। केवल दुलहन एक ओर दुबकी बैठी थी। नाटे

दुल्हे ने दुलहन को भी नृत्य करने का आह्वान किया। पर खीझकर उसने उस नाटे को ढकेल दिया।

छोटा भाई इस बीच अटारी से उतर पड़ा, नाटे लोगों की नाव को बाँध दिया, द्वार के सामने आकर खड़े हो देखता रहा। थोड़ी देर मौन रहने के बाद उसने भीतर गोली चला दी। बंदूक़ की आवाज़ सुनते ही सभी नाटे लोग बाहर आये, उन लोगों ने देखा कि उनकी नाव रस्सों से बाँध दी गयी है, इसलिए वे लोग डर के मारे पहाड़ों में भाग गये।

घर में केवल दुलहन, छोटा भाई और सोने व चाँदी के बर्तन बच रहें। दुलहन ने उसे अपनी सारी कहानी सुनायी। जब वह छोटी लड़की थी, तभी ये नाटे लोग उसे उठा ले गये और उसे पाल-पोसकर बड़ा किया। उसकी ज़िंदगी आराम से तो कटी, पर उसे ये नाटे लोग बिलकुल पसंद न आये। एक नाटे ने उसे अपने साथ शादी करने को सताना शुरू किया। वह उन लोगों से तंग आ गयी और तब से वह नाटे लोगों से घृणा करने लगी।

दुलहन के गाँव का नाम तथा उसके माता-पिता के नाम सुनने पर छोटे भाई को मालूम हो गया कि वह उसकी रिश्तेदार है। उसने मन में सोचा–"मैं सचमुच होनहार हूँ। इसमें कोई संदेह नहीं है।"

इसके बाद वे दोनों नाटों की नाव में समुद्र को पारकर अपने शहर पहुँचे और

वहाँ शादी करके सुखपूर्वक अपनी गृहस्थी चलाने लगे।

अपने छोटे भाई को उससे भी बड़े धनी बने देख बड़े भाई ने सोचा कि छोटे को नाटे लोगों से ही संपत्ति मिल गयी है। उसने यह अफ़वाह भी सुन रखी थी कि जाड़े के मौसम में नाटे लोग उस टापू में आ जाते हैं।

दूसरे साल सर्दी के मौसम में बड़ा भाई उस टापू में गया। जब वह टापू के निकट पहुँचने जा रहा था, तभी उसे नाटे लोगों की भयंकर आवाज़ें और समुद्र पर रोशनी भी दिखाई दी। वह डरकर अपने घर में दौड़ गया।

इस बार समुद्र से जो नाटे लोग आये, वे दूसरी जाति के थे। वे देखने में मोटे थे और चमड़े धारण किये हुए थे। वे लोग नावों से नहीं आये, बल्कि समुद्र पर तैर कर आये थे। उन लोगों को घर में घुसते देख बड़ा भाई अटारी पर जा बैठा। एक नाटे ने चूल्हे में छींका तो आग जल उठी। उस आग में नाटे लोगों ने कच्ची लकड़ी डाल दी, जिससे सारे घर में धुआँ फैल गया। बड़ा भाई घर से भाग निकलना चाहता था, मगर उसका शरीर इतना मोटा था कि वह खिड़की में से बाहर निकल न पाया। वह डर के मारे ज़ोर ज़ोर से चिल्ला पड़ा, मगर नाटे लोगों की चिल्लाहटों के बीच उसकी आवाज़ किसी के कान तक न पहुँची।

सवेरा होने के पहले सभी नाटे लोग उस घर से भाग गये। बड़ा भाई भी खिड़की से बाहर निकल सका। वह बड़ी मुश्किल से घर पहुँचा। मगर उसका दिमाग खराब हो गया। रह रहकर वह ज़ोर से चिल्ला उठता। मरने के पहले उसका पागलपन जाता रहा। उस टापू में उसने जो यातनाएँ भोगीं, उनका परिचय देने के बाद ही उसकी मौत हो गयी।

इसके बाद उस टापू में फिर कोई न पहुँचा। एक तूफ़ान के कारण वह टापू समुद्र में डूब गया।
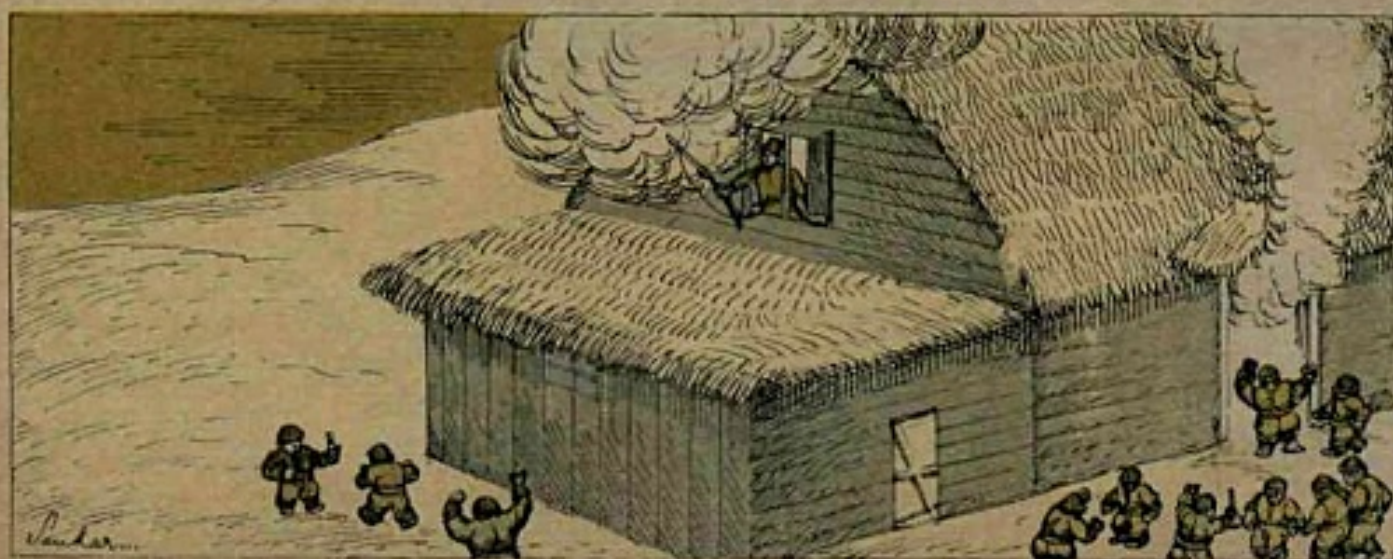
अलीबाबा और चालीस चोर

बहुत दिन पहले की बात है। फ़ारस के एक शहर में कासिम और अलीबाबा नामक दो भाई थे। उनका बाप गरीब था। ज़मीन-जायदाद न होने की वजह से उन्हें जल्द ही फाके करने पड़े। बड़ा भाई कासिम चालाक था। इसलिए वह एक चालाक बूढ़ी के आश्रय में गया और उसकी मदद से एक अमीर लड़की से शादी की। इस तरह वह एक दूकान का मालिक भी बना। इस तरह उसकी तक़लीफ़ें जाती रहीं। वह बड़े ही आराम के साथ अपने दिन काटने लगा।

छोटा भाई अलीबाबा लकड़ी काटकर बेच देता और उस आमदनी से अपने परिवार का खर्च चला लेता। उस आमदनी से थोड़ा-बहुत बचाकर अलीबाबा ने पहले एक गधा खरीदा, कुछ समय बाद दूसरा व तीसरा गधा भी खरीदा। वह तीनों गधों को हाँककर जंगल में जाता, लकड़ी लादकर शहर में लौटता। उस लकड़ी को बेच जो कुछ मिलता, उसी से वह अपना खर्च चलाता, मगर वह हमेशा प्रसन्न रहता था। तीसरा गधा खरीदने के बाद लकड़हारों में अलीबाबा की साख बढ़ गयी। इसलिए एक लकड़हारे ने अपनी लड़की देकर अलीबाबा की शादी की। अलीबाबा की बीबी भी ग़रीब परिवार की थी, इसलिए अपने साथ कुछ संपत्ति न लायी। मगर गरीबी और अमीरी शाश्वत नहीं होतीं।

अलीबाबा के बच्चे भी हुए, उनका सारा परिवार लकड़ी बेचकर अपने दिन काटने लगा।

एक दिन अलीबाबा जंगल के घने वृक्षों के बीच लकड़ी काट रहा था। उसके गधे थोड़ी ही दूर पर घास चर रहे थे।
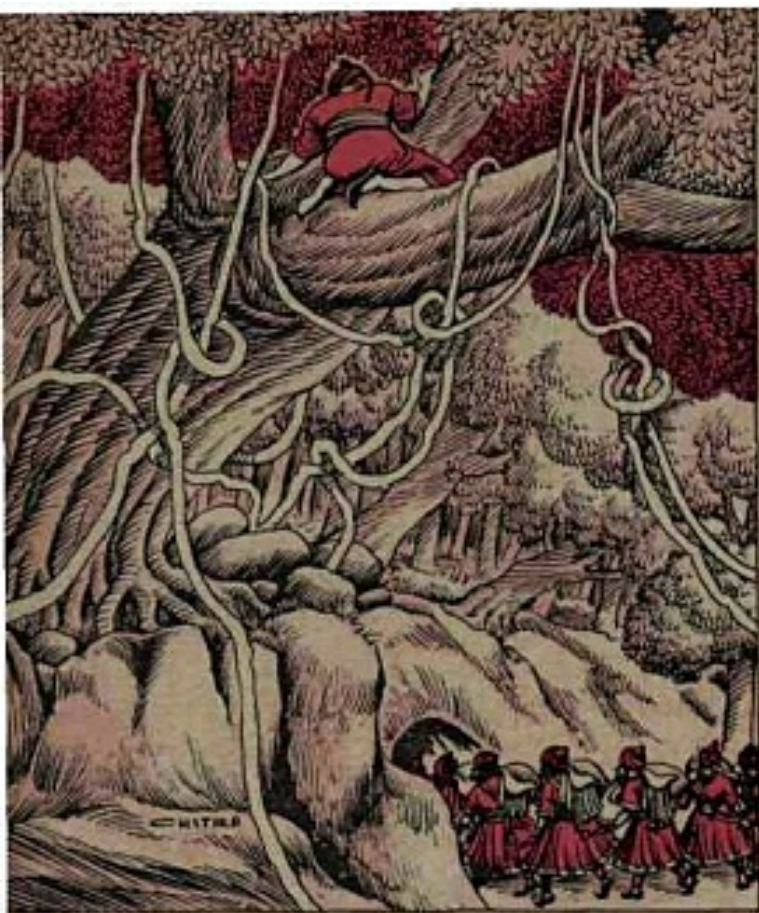
उस समय अचानक उसकी क़िस्मत खुल गयी। अलीबाबा को दूर पर घोड़ों के दौड़ने की आवाज़ सुनाई दी। अलीबाबा स्वभाव से शांत और कायर था, इसलिए उसने पेड़ पर चढ़कर चारों तरफ़ नज़र दौड़ायी, उसे पेड़ के ऊपर से सारा जंगल दिखाई दे रहा था।

थोड़ी ही देर में हथियारों से लैस कई घुड़सवारी उधर से आ निकले। उनके चेहरे काले थे, मगर उन लोगों की आँखें लाल थीं। उन्हें देखते ही अलीबाबा ने समझ लिया कि ये लोग भयंकर लुटेरे हैं।

वे सब पेड़ के पास पहुँचे। अपने नेता का इशारा पाकर घोड़ों पर से उतर पड़े, घोड़ों को बाँध कर उनके आगे जौ डाल दिया। इसके बाद घोड़े की पीठ से थैलियाँ उतार कर पैदल चलने लगे, अलीबाबा ने उन्हें गिना, वे कुल चालीस आदमी थे।

अलीबाबा जिस पेड़ पर चढ़ा था, वह एक टीले पर था। चोर सब उस टीले के नीचे धन से भरी थैलियाँ ढोते आये और एक बड़ी चट्टान के पास खड़े हो गये। चोरों का सरदार आगे बढ़ा और उस चट्टान को देखते बोल उठा–"खुल जा, सम, सम!" तुरंत वह बड़ी चट्टान खुल गयी। सब चोरों के भीतर जाने के बाद नेता भी भीतर चला गया और बोला–"बंद हो जा, सम सम!" तुरंत वह चट्टान बंद हो गयी।

पेड़ पर बैठे अलीबाबा साँस रोककर अचरज के साथ यह सब देख रहा था। उसने मन में सोचा कि खुदा मुझे बचावे कि ये जादूगर मुझे पेड़ पर बैठे न देख ले। वह चुपचाप पेड़ पर दुबक कर बैठ गया। गधे आवाज करते घास चर रहे थे, वह डर गया।

बड़ी देर बाद ऐसी आवाज़ हुई, मानों बादल गरज रहे हों। चट्टान खुल गयी। चालीस चोर खाली थैलियों के साथ वापस लौटे। सब के घोड़ों पर सवार

होने के बाद चोरों के सरदार ने ऊँची आवाज़ में कहा–"बंद हो जा, सम सम!" चट्टान पहले की भांति बंद हो गयी। अपने सरदार के पीछे सभी चोर कहीं चले गये।

अलीबाबा यह सोचकर बड़ी देर तक पेड़ पर ही बैठा रहा कि कहीं चोर लौट न आवे। सब चोर आँखों से ओझल होने के बाद वह इतमीनान से पेड़ से उतरा। साँस रोक कर दबे पाँवों से चलते वह चट्टान के निकट पहुँचा। वह बराबर अपने गधों का ख्याल रखता था। क्यों कि वे ही गधे उसके परिवार के पेट पालने के आधार थे। उसका डर था कि कहीं वे गधे आवाज़ न कर उठे और उसे कोई देख न ले।

मगर अब उसकी मानसिक दशा में परिवर्तन आया। उसके दिमाग में क़िस्मत ने एक नयी जिज्ञासा पैदा की। उसने चट्टान की जाँच करके देखा तो चट्टान में कहीं फटन दिखाई न दी। फिर भी उसने चालीस चोरों को उस गुफ़ा में घुसते अपनी आँखों से देखा था। इसलिए उसमें ज़रूर कोई जादू होगा। चट्टान को खोलने व बंद करने का मंत्र उसने सुन रखा था, अगर वह भी उस मंत्र का उपयोग करे तो क्या होगा? यही विचार उसके दिमाग में मंडराने लगा।

अलीबाबा की कायरता जाती रही, उसने चट्टान की ओर मुड़कर कहा– "खुल जा सम सम!" घबराहट में अलीबाबा ने ये शब्द धीमी आवाज़ में ही कहे थे, पर चट्टान खुल गयी। चट्टान को खुलते देख डर के मारे उसे भाग जाना चाहिये था, मगर भाग्य ने उसे भीतर झांकने को प्रेरित किया।

भीतर उसे अंधेरी गुफा नहीं दिखाई दी, बल्कि एक विशाल चौपाल मिला। पहाड़ी चट्टान को तराश कर वह गुफा बनायी गयी थी। फ़र्श गच की गयी थी, छत से रोशनी फूट रही थी। अलीबाबा ने अल्लाह की याद करते चौपाल में क़दम रखा। दीवारों से सटाकर छत तक क़ीमती चीजें सजाकर रख दी गयी थीं। उनमें रेशमी कपड़े, जरी के वस्त्र, तरह-तरह के खाद्य पदार्थ, सोना व चांदी की ईंटें, सोने के दीनार इत्यादि भरे थे। इनके अलावा सोने व रत्नों के ढेर लगे थे। कहीं भी क़दम रखने की जगह न थी।

अलीबाबा ने तब तक अपनी ज़िंदगी में सोने का दीनार तक न देखा था। उसने सोचा कि यह सारी संपत्ति कई सौ सालों में इकट्ठी की गयी होगी। कई पीढ़ियों के लुटेरों ने इस काम में अपना वक़्त लगाया होगा।

उसने मन में सोचा–'ऐ अलीबाबा! गधे व लकड़ी ही तुम्हारी ज़िंदगी के आसरे

थे, कई पापों की कमाई यह संपत्ति ख़ुदा ने तेरे सामने ढेर लगा रखी है! तेरी क़िस्मत खुल गयी!'

यह सोचकर अलीबाबा ने खाद्य पदार्थों की एक थैली खाली कर दी और उसमें सोने के दीनार भर दिये। अपने गधों के ढोने लायक़ दीनार थैलियों में भर दिये। गधों को हांक कर चट्टान के पास ले आया। उन पर दीनारों की थैलियाँ लाद दीं। ऊपर कांटेदार लकड़ियाँ फैला दीं। फिर मंत्र के द्वारा चट्टान पहले की भांति बंद कर दी। गधों को ले वह अपना घर पहुँचा।

घर पहुँच कर अलीबाबा ने देखा कि दर्वाजा बंद है और भीतर अलगनी चढ़ा दी गयी है। उसने अपने मंत्र की परीक्षा लेने के ख्याल से कहा–'खुल जा सम सम।' फिर क्या था, दर्वाज़ा खुल गया, उसने गधों के साथ भीतर प्रवेश करके 'बंद हो जा सम सम!' कहा, दर्वाजा बंद होने के साथ फिर कुंड़ी चढ़ गयी।

अलीबाबा गधों पर से थैलियाँ उतार ही रहा था कि उसकी बीबी दौड़ कर आ पहुँची और बोली–"मैंने तो भीतर कुंड़ी चढ़ा रखी थी, तुमने दर्वाज़ा कैसे खोल दिया? क्या तुमने कोई जादू तो नहीं कर दिया?"

अलीबाबा ने अपनी बीबी के सवाल का जवाब नहीं दिया, बल्कि उसने खुशी में आकर कहा–"अरी, अल्लाह ने हमें ये थैलियाँ दे रखी हैं, इनको भीतर पहुँचाने में मेरी मदद करो, तुम यह क्या दर्वाज़े की बात कहती हो?"

अलीबाबा की बीबी ने थैलियाँ खोलकर देखा। उसने यह सोचा कि उन थैलियों में तांबे के सिक्के होंगे, फिर भी वह यह सोचकर डर गयी कि उसका शौहर चोरों के दल में शायद शामिल हो गया हो। सारी थैलियों को भीतर पहुँचाने के बाद वह अपने कपड़ों को फाड़ते, बाल नोचते चिल्ला-चिल्लाकर रोने लगी–'उफ़! हमारी

बदक़िस्मती है, बच्चे हैं, फाँसी के तख़्ते पर चढ़ना पड़ेगा। तुम चोरी का माल साथ ले आये हो? हमें पाप का यह सोना नहीं चाहिये। रूखी-सूखी रोटी ही हमें प्यारी है।'

अलीबाबा गुस्से में आकर बोला—"अरी फाँसी का तख़्ता नहीं, तेरा दिमाग खराब हो गया है! तुम रोती क्यों हो?"

"इस संपत्ति की वजह से हम पाप के दल दल में फँस गये हैं। इनको कहीं दूर फेंक आओ, तुम्हारा पुन्न होगा।" ये शब्द कहते वह फिर रोने लगी!

"छी! औरतों का दिमाग बड़ा खराब होता है, सोचती तक नहीं, क्या तुम यह समझती हो कि मैंने यह सब चुराया है? आज सुबह अल्लाह ने मुझ पर मेहरबानी की है। पहले इन थैलियों को तो खाली कर दो, फिर मैं तुम्हें सारी कहानी सुनाता हूँ।" अलीबाबा ने समझाया।

इसके बाद अलीबाबा ने एक चटाई बिछायी और उस पर सारे दीनार उड़ेल दिये। सोना चमाचम चमक रहा था। अलीबाबा ने सारी कहानी अपनी बीबी को सुनायी।

यह कहानी सुनने पर अलीबाबा की बीबी का डर जाता रहा। वह खुशी से नाच उठी। उसने अनेक प्रकार से अल्लाह की तारीफ़ की। ढेर के सामने बैठ कर वह दीनारों को गिनने लगी।

अलीबाबा ने हँसकर कहा—"पगली, यह तुम क्या करती हो? तुम कब तक ये सब गिनते बैठी रह सकती हो? रसोई घर में गड्ढा खोदकर इन्हें गाड़ देंगे। अड़ोस-पड़ोसवालों को मालूम हो जाय तो हम पर ईर्ष्या करेंगे। राजभटों को मालूम हो जायगा तो खतरा पैदा हो सकता है।"

अलीबाबा की बीबी को हर काम करीने से करने की आदत थी। उसने कहा—"हमें तो इन दीनारों को या तो मापना होगा या तौलना है। वरना हमें कैसे पता

चलेगा कि हम कितने धनी हैं? ज़रा सब्र करो, मैं बगल के घर से मापनेवाला पात्र लाती हूँ। तुम्हारे गड्ढा खोदने तक मैं माप देती हूँ। तब हम यह सोना गाड़ देंगे।"

अलीबाबा को यह बेकार-सा लगा फिर भी जिस दिन उसकी क़िस्मत खुल गयी, उस दिन वह अपनी बीबी की इच्छा को पूरा करना चाहता था। इसलिए बोला– "तब तो जल्दी ले आओ। पर याद रखो, कहीं भूल से भी सही, यह रहस्य प्रकट न करना।"

अलीबाबा की बीबी सीधे अपने जेठ कासिम के घर गयी और कासिम की बीबी से बोली–"आपकी लकड़ी का मापनेवाला पात्र तो दीजिये, मैं अभी लौटा देती हूँ।"

कासीम की बीबी बड़ी घमण्डी थी। वह एक बार भी अपने देवर और देवरानी को देखने उसके घर न गयी थी। अलीबाबा के बच्चों को उसने एक बार भी मिठाई खिलायी न थी। 'मापनेवाले पात्र' की बात सुनते ही वह अचरज में आ गयी। क्यों कि अलीबाबा के घर में कभी एक दिन से ज्यादा अनाज़ न होता था। कभी ज़्यादा इकट्ठा भी हुआ तो एक हफ़्ते के बराबर अनाज इकट्ठा होता

था। उसके मन में यह जानने की इच्छा हुई कि ग़रीबों के लिए मापनेवाले पात्र की ज़रूरत कैसे आ पड़ी? उसने पूछा–"बड़ा पात्र दूँ या छोटा?"

"छोटा ही दे दीजिये।" अलीबाबा की बीबी ने कहा।

कासिम की बीबी भीतर गयी। एक छोटे पात्र के नीचे चर्बी चिपका कर अलीबाबा की पत्नी के हाथ दिया।

घर पहुँच कर अलीबाबा की बीबी दीनार मापते हिसाब दीवार पर कोयले से लिखती गयी। इसी वक़्त अलीबाबा रसोई में गड्ढा खोद कर बाहर आया। अलीबाबा दीनार ले जाकर गाड़ने लगा,

तब उसकी बीबी वह पात्र लौटाने के लिए कासिम के घर गयी। पात्र के नीचे एक दीनार चिपक गया था, मगर बेचारी अलीबाबा की बीबी को यह बात मालूम न थी।

"काम के पूरा होते ही लौटाने आयी। फिर दुबारा मांगने पर तुमको भी देने की इच्छा होगी न?" अलीबाबा की बीबी ने कहा।

अलीबाबा की बीबी के जाते ही कासिम की औरत ने पात्र को औंधे मुँह करके देखा। जैसे उसने सोचा था कि उसमें अनाज के दाने चिपके होंगे, पर उसमें सोने का दीनार चिपका हुआ था। उसे देख कासिम की बीबी का चेहरा एक दम लाल हो उठा। वह ईर्ष्या से जल उठी। मन में कहने लगी—"इन कंगालों को मापने लायक़ सोना कहाँ से मिला?"

अब वह अपने शौहर के दूकान से लौटने तक इंतज़ार न कर सकी, उसको बुला लाने उसने नौकरानी को भेजा।

जब हाँफते कासिम घर पहुँचा तो उसकी बीबी इस तरह कोसने लगी, मानों कासिम ने कोई अपराध किया हो। वह बेचारा दम तक न ले पाया था कि उसकी बीबी उस पर बरस पड़ी और अपने हाथ से दीनार को टनटनाते हुए कहा—"देखते हो न? यह दीनार तुम्हारे छोटे भाई का है। तुम्हारी अक़्ल कहाँ गयी? तुम यह सोचकर इतराते हो कि तुम्हारे पास बड़ी दूकान है और तुम्हारे भाई के पास सिर्फ़ तीन गधे हैं। लकड़ी काटकर भूखों मरनेवाले तुम्हारे भाई के पास कितना सोना है, तुम्हें खबर तक नहीं। उसे तो उन दीनारों को गिनने की भी फ़ुरसत नहीं, इसलिए वह इस तरह तौल रहा है, जैसे अनाज बेचनेवाला तौलता हो? अगर उसके पास ढेरों दीनार न होते तो वह क्यों तौलता? तुम जिन्दगी भर कमाओ तो भी अपने भाई के बराबर बन नहीं सकते।"

(और है)

बिल्ली का दान

एक गाँव में एक अमीर ने एक बढ़िया मकान बनवाया। उस गाँव के परमानंद नामक एक ज्योतिषी ने गृह-प्रवेश का मुहूर्त रखा। गृह-प्रवेश के पहले अमीर ज्योतिषी को वह मकान दिखाने ले आया। उस समय एक बिल्ली अपने बच्चों के साथ इस ओर के चबूतरे पर से उस ओर के चबूतरे पर कूदते उन्हें दिखाई पड़ी।

इसे देखते ही परमानंद के मन में एक विचार आया। मकान मालिक बड़ा अमीर ही न था, बल्कि अंधविश्वास रखनेवाला भी था। इसलिए उसके द्वारा खूब रुपये ऐंठने का ज्योतिषी ने उपाय सोचा।

ज्योतिषी ने अमीर से कहा–"मालिक, आपने इस बिल्ली का शकुन देखा? आप फिलहाल गृह-प्रवेश का मुहूर्त स्थगित रखिये। आपशकुन की शांति करानी है, याग भी करना है।"

"क्या शांति करानी है? याग भी करना है?" घबराते हुये मकान मालिक ने पूछा।

"मैं आपको सारी बातें समझाऊँगा।" यह कहकर परमानंद एक संस्कृत ग्रन्थ ले आया। पन्ने उलट-पलट कर इधर उधर पढ़कर सुनाया–"सुनते हैं न, मार्जाल का लांघना और उसके साथ दो बच्चों के होने से यह सूचित करता है कि इस मकान में दो पिशाच कूदते खेल रहे हैं। उनको भगाने के लिए 'वज्रशुंठ' नामक एक याग करके उस बिल्ली के परिमाण में एक सोने की बिल्ली बनवा कर एक मंत्रवेत्ता को दान करना होगा।"

"अच्छी बात है, ऐसा ही करेंगे। याग आप अपने ही हाथों से कीजिये। दान भी आप ही ग्रहण कीजिये।" मकान मालिक ने बताया। उसका विश्वास था कि

रामेश्वर दयाल

परमानंद से बढ़कर कोई मंत्र-वेत्ता और कोई नहीं है।

गृह-प्रवेश के लिए मुहूर्त निश्चित किया गया और उसी मुहूर्त में याग का भी प्रबंध किया गया। उसमें कुछ मंत्रवेत्ता भी आये। उनमें कृष्ण भट्ट नामक व्यक्ति मंत्र-शास्त्र का अच्छा ज्ञाता था। उसने मार्जाल शकुन अथवा वज्रशुंठ याग के बारे में कहीं नहीं पढ़ा था और न सुना ही था। उसने समझ लिया कि परमानंद मकान मालिक को धोखा दे रहा है, उसने परमानंद के पास जाकर पूछा–"अरे भाई, यह याग कैसा? सोने की बिल्ली का दान कैसा? मैं इसका फ़ैसला करना चाहता हूँ।"

"तुम गड़बड़ मत करो। इस काम के पूरा होते ही हम दोनों सलाह-मशविरा करके बाँट लेंगे।" परमानंद ने कहा।

कर्मकांड पूरा हो गया। परमानंद ने सोने की बिल्ली का दान लिया। जब सब लोग घर जाने लगे, तब कृष्णभट्ट ने पारमानंद से पूछा–"तुमने मेरी शंका का समाधान नहीं किया?"

"अरे भाई, इसमें शंका की क्या बात है? मकान मालिक ने मुझे दान दिया और मैं ने लिया। यह तो हम दोनों से संबंधित बात है।" परमानंद ने कहा।

"लेकिन इसमें धोखा है, इसका पता मकान मालिक के साथ राजा को भी मालूम होना चाहिए।" कृष्णभट्ट ने क्रोध में आकर कहा।

"अंधेरा फैलने के बाद तुम मेरे घर आओगे तो मैं तुमको सोने की बिल्ली में हिस्सा दूंगा।" परमानंद ने कहा।

"मुझ अकेले को देना नहीं, आज गृह-प्रवेश के समय हम दस मंत्रवेत्ता आये हैं। सब को हिस्सा मिलना चाहिए।" कृष्णभट्ट ने कहा।

"अच्छी बात है, तुम आधी रात के समय मेरे घर आओ।" परमानंद ने कहा। कृष्णभट्ट अपने घर चला गया।

२३. शिशुपाल का वध

द्वारका में कृष्ण ने राज्य का सारा भार वसुदेव को सौंप दिया, तब राजसूय याग के लिए आवश्यक विविध प्रकार की सामग्री, रत्न, धन, धान्य इत्यादि लेकर रथ पर सवार हो, इन्द्रप्रस्थ जा पहुँचा।

युधिष्ठिर ने कृष्ण से कहा—"राजसूय याग करने के लिए तुम्हारी सहायता की मुझे बड़ी जरूरत है। इसलिए या तो तुम मुझे यह याग करने की अनुमति दो, या तुम्हीं दीक्षा लेकर यह याग करो।"

"युधिष्ठिर, साम्राज्य का भार वहन करने के लिए आप ही उपयुक्त व्यक्ति हैं। इसलिए आप ही यह राजसूय याग कीजिये आपको जो-जो काम करने हैं, वे सब मैं करूँगा।" कृष्ण ने समझाया।

युधिष्ठिर कृष्ण की बातें सुनकर बहुत ही प्रसन्न हुए। तब सहदेव को बुलाकर आदेश दिया—"सहदेव, तुम याग की सारी तैयारियाँ करो, साथ ही चारों वर्णवालों के पास निमंत्रण भेज दो।" फिर नकुल को बुलाकर कहा—"तुम हस्तिनापुर से भीष्म, धृतराष्ट्र, विदुर, द्रोण, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, दुर्योधन आदि को बुला लाओ।"

सहदेव ने सारा प्रबंध किया। नकुल हस्तिनापुर जाकर कौरव प्रमुखों को बुला लाया। उन लोगों से युधिष्ठिर ने अपने याग का सारा वृत्तांत सुनाया, तब दान-धर्म इत्यादि करने कृपाचार्य को, भोजनालय का प्रबंध देखने दुश्शासन को, ब्राह्मणों का अतिथ्यि करने का भार अश्वत्थामा को,

राजाओं का सत्कार करने संजय को, उपहारों को सुरक्षित करने का भार दुर्योधन को, अन्य सारे प्रबंधों की जिम्मेदारी भीष्म तथा द्रोणाचार्य को समर्पित किया।

राजसूय याग तथा मय सभा देखने की अभिलाषा से ही अनेक लोग आये थे। राजा सब अपार उपहार लाये थे। याग के सभी दिनों में लगातार भोज दिये जा रहे थे। याग वैभव के साथ संपन्न हुआ। तब भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा—"युधिष्ठिर, बुजुर्गों का कहना है कि स्नातक, ऋत्विज, सद्गुरु, प्रिय व्यक्ति, राजा तथा इंद्रियों पर नियंत्रण रखनेवाले—ये छठों पूजा के योग्य हैं। ऐसे लोगों में से तुम उत्तम. व्यक्ति को चुनकर उनकी पूजा करो।"

"ऐसे व्यक्ति का आप ही निर्णय करके बता देने की कृपा करेंगे तो मैं उन्हें अर्घ्य प्रदान करूँगा।" युधिष्ठिर ने भीष्म से कहा। भीष्म ने सोच-विचार कर कहा—"इस सभा में अग्रपूजा पाने योग्य व्यक्ति कृष्ण को छोड़ हैं ही कौन? उन्हीं को सर्व प्रथम अर्घ्य प्रदान करो।"

युधिष्ठिर ने बड़ी व्यावहारिक कुशलता के साथ भीष्म के आदेश को सर आँखों पर ले सहदेव को बुलाकर आज्ञा दी कि प्रथम अर्घ्य कृष्ण को प्रदान करे। कृष्ण ने बड़ी प्रसन्नता के साथ अर्घ्य ले लिया।

इस पर शिशुपाल ने अपना आक्षेप प्रकट करते हुए युधिष्ठिर से कहा—"युधिष्ठिर, इतने राजा तथा महानुभावों के रहते आपने यादव वंशी कृष्ण को कैसे प्रथम अर्घ्य दे डाला? क्या ये वृद्ध हैं! या आपके आचार्य हैं? या ऋत्विज हैं? इनमें आपने कौन-सा बड़प्पन देखा? आपको यह सलाह देनेवाले भीष्म भी उचित-अनुचित का ज्ञान नहीं रखते। यदि आप कृष्ण की ही प्रथम पूजा करना चाहते थे, तो इन सब राजाओं के पास निमंत्रण क्यों भेजा? क्या यह इन सब राजाओं का अपमान नहीं है? हमने आपको प्रतापी समझ कर ये सब उपहार

तुरंत परमानंद मकान मालिक के घर जाकर बोला–"मालिक, मैं कहना भूल गया। हमने पिशाचों को तो भगा दिया। मगर उनका सेवक आधी रात के समय आपके पास आकर शायद आपको तंग कर सकता है। वह पिशाच आज हमारे यहाँ आये हुए किसी ब्राह्मण के वेश में आ सकता है। इसलिए उसके आते ही आप इस लाठी से उसके सर पर दे मारिये। यह मंत्र-दण्ड है। उस पिशाच को दण्ड देने के बाद फिर आपको कोई तक़लीफ़ न होगी।" ये शब्द कहते परमानंद ने मकान मालिक के हाथ वह मंत्र-दंड दिया।

उस दिन आधी रात को कृष्णभट्ट ने परमानंद के घर जाकर दर्वाज़ा खटखटाया। परमानंद ने दर्वाज़ा खोलकर पूछा–"अरे तुम हो? किसलिए आये हो?"

"मैं उस सोने की बिल्ली के बारे में बात करने आया हूँ।" कृष्णभट्ट ने जवाब दिया।

"तुम से मुझे कुछ बात नहीं करनी है। वह सोने की बिल्ली मेरी है। मैं उसमे किसी को दान नहीं दूंगा।" परमानंद ने कहा।

"तब तो मैं मकान मालिक को सारा रहस्य बता दूं?" कृष्णभट्ट ने कहा।

"अभी जाकर बता दो, मुझे किसीका डर नहीं है।" ये शब्द कहते परमानंद ने दर्वाज़ा ज़ोर से बंद कर दिया।

कृष्णभट्ट सीधे मकान मालिक के घर गया। वह दरवाज़ा खटखटाने ही जा रहा था कि भीतर से उसे किसी के बोलने की आवाज़ सुनाई दी। कृष्णभट्ट ठहर कर सुनने लगा।

"अजी, आप लाठी लिये दर्वाज़े के पास टहल क्यों रहे हैं?" घर की मालिकिन पूछ रही थी।

"बात कुछ नहीं, हमारे परमानंद ने बताया कि पिशाच का नौकर किसी ब्राह्मण के वेष सें आयगा। इस लाठी से

उसका सर फोड़ लीजिये। यह लाठी भी वह दे गया है। इसलिए मैं उसका इंतज़ार कर रहा हूँ।" घर के मालिक ने समझाया।

परमानंद की चाल कृष्णभट्ट को मालूम हो गयी। क़िस्मत बली थी, इसलिए ख़तरा टल गया। ऐसे दुष्ट परमानंद को अच्छी सज़ा दिलाने के ख़्याल से कृष्णभट्ट अपना घर चला गया। अपने नौकर के कान में कुछ बातें बताकर उसे पैसे दे भेज दिया।

नौकर ने परमानंद के घर पहुँच कर दर्वाज़ा खटखटाया और परमानंद के बाहर आते ही कहा–"सरकार, मकान मालिक न मालूम क्यों बेहोश हो गये हैं। मालिकिन ने आपको बुला भेजा है। जल्दी चलिये।"

परमानंद विस्मय के साथ मकान मालिक के घर पहुँचा। उसने दर्वाज़ा खटखटाया। मकान मालिक ने दरवाज़ा खोल परमानंद को सामने देख ये शब्द कहते लाठी से सर पर दे मारा–"अरे कमबख़्त पिशाच! तुम उस पुण्यात्मा के रूप में मुझे दगा देने आये हो?"

परमानंद चोट खाकर नीचे गिर पड़ा। मकान मालिक ने झट दर्वाज़ा बंद कर लिया।

उस अंधेरे में पास में ही छिपे कृष्णभट्ट और उसका नौकर आ पहुँचे और परमानंद के हाथ पकड़ उठाया और धीरे उसके घर ले गये।

"भाई साहब, चोट खाने पर तुम्हारी आशा का पि ाच भाग गया होगा। अब भी सही तुम ापनी सोने की बिल्ली को सब में बराबर बांटोगे कि नहीं?" कृष्णभट्ट ने परमानंद से पूछा।

"मेरी अक़्ल ठिकाने लग गयी। सबको बुला लाओ। मैं बाँट देता हूँ।" परमानंद ने कहा।

दूसरे दिन सोने की बिल्ली को बारह लोगों ने बाँट लिया।

नहीं दिये, हमने इसलिए आपको ये उपहार दिये कि आप धर्म का ज्ञान रखते हैं, सत्यव्रती हैं और साम्राज्य का शासन करने योग्य हैं! आपने यह एक अनुचित कार्य करके अपने सारे यश को खो दिया है।"

इसके उपरांत कृष्ण से शिशुपाल ने कहा— "पांडवों ने तुम्हारे कुतंत्रों से डरकर ही तुम्हें प्रथम अर्घ्य दिया है, मगर तुमको उसे ग्रहण करने से इनकार करना चाहिये था। तुम राजा नहीं हो, इसलिए यह आदर तुम्हारे लिए बेकार है। इससे तुम्हारा ही अपमान होगा न कि सभा में उपस्थित राजाओं का? युधिष्ठिर की धर्मबुद्धि, भीष्म की बुद्धिमत्ता तथा तुम्हारे विवेक से हम लोग भली भांति परिचित हुए हैं। अब इस सभा में रहना उचित नहीं है।"

ये शब्द कहकर शिशुपाल अपने परिवार को साथ लें चला गया।

युधिष्ठिर उसके पीछे दौड़ता गया और समझाया—"शिशुपाल! ठहर जाओ! मेरी बात सुनो! तुम्हारा ऐसा कहना अन्याय है! भीष्म जैसे वृद्ध पितामह का अपमान नहीं करना चाहिये। कृष्ण के बारे में तुम से भी वे अधिक जानते हैं। तुम से भी अनुभवी और बुजुर्ग इस सभा में उपस्थित हैं, पर उन लोगों ने कोई आपत्ति नहीं उठायी। ऐसी हालत में तुम क्यों आक्षेप करते हो?"

इस पर भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा— "तुम इस दुष्ट शिशुपाल को मनाते क्यों

हो? चुप हो जाओ।" इसके बाद सभासदों की ओर मुड़कर कहा–"शिशुपाल मूर्ख है। इसलिए वह कृष्ण का महत्व नहीं जानता। हम प्रथम अर्घ्य कृष्ण को ही दे चुके हैं। हम देखना चाहते हैं कि शिशुपाल हमारा क्या बिगाड़ सकता है?"

सहदेव ने अपना पैर उठाकर घोषित किया–"हमने कृष्ण की पूजा की है। इस पर किसी को आपत्ति हो तो बताइये, मैं उनके सर पर अपना पैर रखूंगा।"
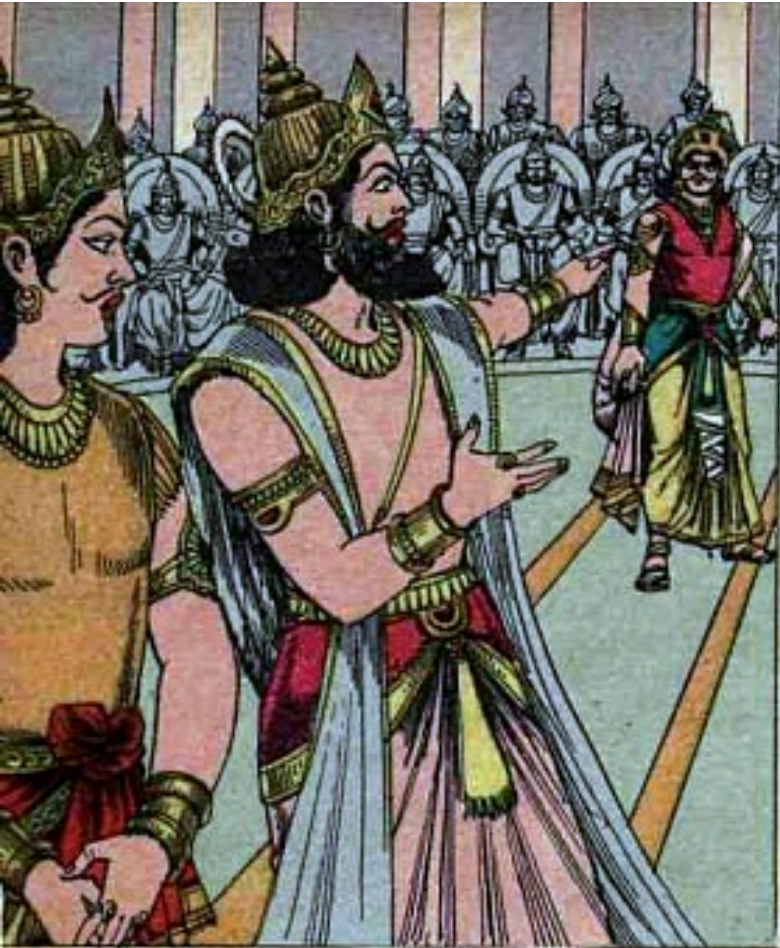
सभा में उपस्थित सभी लोग मौन रह गये। तब शिशुपाल के सेनापति सुनीध ने खड़े होकर कहा–"सब राजाओं से निवेदन है कि सब उठ खड़े हो जाइये। यादव और पांडवों ने हमारा अपमान किया है। सेनाओं को सन्नद्ध कर हम उनका घमण्ड तोड़ देंगे।" इन शब्दों के साथ उसने अपने पक्ष के राजाओं को एक ओर एकत्रित किया। शिशुपाल ने भी युद्ध की अनुमति दे दी। यह सब देख युधिष्ठिर घबरा गये। उन्होंने भीष्म से कहा–"दादाजी, ये सब राजा युद्ध के लिए तैयार हो रहे हैं। आप कोई ऐसा उपाय बता दीजिये, जिससे यज्ञ में भंग न हो और प्रजा की भी हानि न हो।"

भीष्म ने समझाया–"युधिष्ठिर, जब कृष्ण स्वयं तुम्हारे याग की रक्षा कर रहे हैं, तब उसमें विघ्न कौन पैदा कर सकता है? शिशुपाल के बुरे दिन निकट आ गये, इसलिए वह अंट-संट बक रहा है।"

भीष्म की बातें सुनकर शिशुपाल एकदम नाराज़ हो गया और वह भीष्म की निंदा करने लगा। भीम से रहा न गया। आवेश में आकर भीम रौद्र रूप धारण करके शिशुपाल को मारने दौड़ा, तब भीष्म ने उसको रोका।

इसके बाद भीष्म ने भीम को शिशुपाल का वृत्तांत यों बताया–शिशुपाल जब पैदा हुआ, तब उसके तीन आँख और चार हाथ थे और वह गधे की तरह रेंगने लगा। इसे देख उसके माता-पिता सात्वती और

दमघोष ने उसे फेंकना चाहा, तब उन्हें एक अशरीर वाणी सुनायी दी–"तुम लोग इस शिशु को मत फेंको। यह बड़ा ही पराक्रमी बनेगा। इसकी मृत्यु अभी न होगी। इसको मारनेवाला व्यक्ति पैदा हो गया है और वह पल रहा है।"

सात्वती ने उस अशरीरवाणी से पूछा–"इस शिशु को मारनेवाला कौन है?"

"जिसके इसे गोद में लेने पर इसकी एक आँख और दो हाथ जाते रहेंगे, उसी के हाथ में यह मारा जायगा।" अशरीरवाणी ने कहा।

उस दिन से लेकर सात्वती अपने इस विचित्र शिशु को देखने आनेवालों से उसे गोद में लेने की माँग किया करती थी। कुछ समय बाद बलराम और कृष्ण चेदिपुर में आये। दमघोष से थोड़ी देर तक बातें करने के बाद अंतःपुर में जाकर सात्वती को देखा। कुशल-प्रश्न के उपरांत सात्वनी ने अपने पुत्र को बलराम के हाथ दिया, फिर कृष्ण के हाथ दिया। कृष्ण ने जब उसे गोद में लिया तब उसकी तीसरी आँख और अतिरिक्त दो हाथ थे, वे जाते रहें।

सात्वती ने समझ लिया कि कृष्ण के हाथों में उसका पुत्र मारा जायगा, वह घबरा गयी और उससे गिड़गिड़ाया–"कृष्ण, ये जो गलतियाँ करेगा, उनको तुम क्षमा

कर दो।" कृष्ण ने सात्वती को वादा किया कि वह उस शिशु की सौ गलतियों को क्षमा करेगा।

भीष्म की ये बातें सुनकर शिशुपाल ने उनका अपमान किया। इसके बाद उसने कृष्ण से कहा–"हे कृष्ण, तुम मुझ से युद्ध करने तैयार हो जाओ। तुम्हारा वध करने तक भीष्म का घमण्ड चूर न होगा। तुमको मारने के बाद मैं इन पांडवों की खबर लूँगा। ये लोग तुम्हारी पूजा करते हैं, इसलिए ये भी वध करने योग्य हैं।"

शिशुपाल की बातें कृष्ण ने शांति के साथ सुनीं, तब वहाँ पर उपस्थित राजाओं से कहा–"आप सब ध्यान से सुनिये। यह

शिशुपाल मेरा फुफेरा भाई है। फिर भी इसने अकारण ही हमारे यादवों के लिए अनेक अपकार किये हैं। जब हम लोग प्रागज्योतिषपुर पर हमला करने गये थे, तब इसने हमारे द्वारका पर आक्रमण किया और उसमें आग लगाकर चला गया। जब हम लोग रैवतक पर्वत पर विहार कर रहे थे, तब इसने वहाँ आकर हममें से कुछ लोगों को मार डाला और कुछ नारियों को बन्दी बनाया। मेरे पिता वसुदेव ने जब अश्वमेध यज्ञ किया, तब इसने उस अश्व का अपहरण किया, इसने ब्रभ्रुवाह की पत्नी का अपहरण किया, रुक्मिणी के साथ भी विवाह करना चाहा, पर इसकी चाल नहीं चल पायी। इस प्रकार इसने अनेक अत्याचार किये हैं। मैंने अपनी फूफी को वादा किया था, इसलिए मैं इसके सभी अत्याचारों को सहता गया।"

इस पर शिशुपाल ने परिहासपूर्वक हँसकर कहा–"हे कृष्ण, मैंने जिस नारी को वर लिया था, उसके साथ विवाह करके इस भरी सभा में यह बात कहते तुम्हें लज्जा नहीं आती? तुम ऐसा बता रहे हो, मानों मैं तुम्हारी कृपा से जीवित हूँ। मैं तुम से बिलकुल नहीं डरता! चाहे तुम जो कर सकते हो, करो।"

तुरंत कृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र को अपने हाथ में ले शिशुपाल पर फेंक दिया। उस चक्र ने शिशुपाल का सर काट दिया। शिशुपाल वहीं गिर पड़ा। उसमें से एक तेज निकला और वह कृष्ण में विलीन हो गया। इसे देख सब लोग चकित रह गये। युधिष्ठिर ने शिशुपाल के शव की अंत्येष्ठिक्रियाएँ करने का आदेश दे शिशुपाल के पुत्र का राज्याभिषेक किया।

राजसूय याग समाप्त हुआ। युधिष्ठिर ने अवबृथ स्नान कर दीक्षा समाप्त की। सभी राजाओं ने युधिष्ठिर के निकट जाकर उनका अभिनंदन किया, उनसे विदा माँगी। युधिष्ठिर ने सब का उचित रूप में सत्कार किया और हस्तिनापुर के पार

करने तक उन्हें विदा करने अपने भाइयों को नियुक्त किया। इसके बाद कृष्ण भी द्वारका को लौट गया। मय सभा को देखने के ख्याल से दुर्योधन शकुनि के साथ वहीं रह गया।

एक दिन युधिष्ठिर की सभा में व्यास महर्षि आ पहुँचे। उस समय युधिष्ठिर ने अपने मन की व्याकुलता को उनके सामने व्यक्त किया–"राजसूय याग के समय शिशुपाल का वध हो चुका है, क्या यह उत्पात का कारण न बनेगा?"

"यह एक उत्पात ही तो है! इसका परिणाम तेरह वर्ष बाद ही मालूम होगा। तब क्षत्रियों का विनाश होगा।" व्यास महर्षि ने कहा।

यह बात सुनने पर युधिष्ठिर का दिल बैठ गया। पर अर्जुन ने उन्हें सांत्वना दी।

मय सभा को देखते दुर्योधन ने पराभव प्राप्त किया। जहाँ पानी न था, वहाँ पानी के भ्रम में पड़कर उसने अपनी धोती को भीगने से ऊपर उठाया। जहाँ पानी था, उसे फ़र्श समझ कर चलता गया, जिससे उसके कपड़े भीग गये। इसे देख भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, द्रौपदी तथा परिचारक भी हँस पड़े। यह बात जानकर युधिष्ठिर ने दुर्योधन के मन को सांत्वना देने के लिए अच्छे वस्त्र प्रदान किये।

मगर दुर्योधन और कई बार अपमानित हुआ। वह जहाँ किवाड़ थे, वहाँ किवाड़ नहीं है, यह समझ कर भीतर घुसने गया जिससे उसके माथे पर चोट आ गयी। जहाँ फ़र्श समतल थी, वहाँ ऊँचे का भ्रम करके गिर पड़ा। जिस मय सभा को देख वह प्रसन्न होना चाहता था, वह उसकी आँखों में कांटा बन गयी। वह ईर्ष्या से एक दम जल उठा।

युधिष्ठिर को एक विशाल साम्राज्य प्राप्त हुआ। एक लोकोत्तर मय सभा उन्हें प्राप्त हुई। इनकी वजह से दुर्योधन की ईर्ष्या और भभक उठी। वह इसी ईर्ष्या को लेकर युधिष्ठिर से विदा लेकर हस्तिनापुर की ओर चल पड़ा।

"ये हमारे भाई को वृषभासुर के हाथ से छुड़ानेवाले हैं?" यक्षिणियों ने जवाब दिया।

"सच? क्या तुम मेरे पुत्र को उस राक्षस के चंगुल से बचा सकते हो?" यक्षराजा ने मंगल से पूछा।

"मैं ज़रूर कोशिश करूँगा।" मंगल ने कहा।

"क्या तुमने उस वृषभासुर को देखा है?" राजा ने फिर मंगल से पूछा।

"नहीं, महाराज!" मंगल ने जवाब दिया।

यक्षराज ने मंगल को एक बढ़िया घोड़ा चुनने का आदेश दिया, इसके बाद अपना निजी खड्ग, ढाल, धनुष और गदा भी उसे दे दिया। फिर अपने सेनापति को बुलाकर उसे आदेश दिया—"तुम इस युवक को वृषभासुरवाले पहाड़ के पास छोड़ आओ।"

मंगल एक बढ़िया घोड़ा चुनकर छलांग मारकर उस पर सवार हुआ। इसे देख राजा ने अपने मन में सोचा कि यह युवक ज़रूर विजयी होकर लौट आवेगा।

यक्षराजा का सेनापति मंगल को वृषभ पर्वत तक ले गया और बोला—"इसी पहाड़ पर वृषभासुर है। मैं अब लौट जाता हूँ।"

मंगल सेनापति को विदा करके घोड़े को पहाड़ की ओर ले गया। घोड़ा राक्षस के क़िले के दर्वाज़े पर जा रुका।

"अरे दुष्ट राक्षस! मेरे साथ युद्ध करने के लिए आ जाओ।" मंगल ज़ोर से चिल्ला पड़ा।

दो द्वारपाल दर्वाज़े खोलकर बाहर आये। लापरवाही से उसकी ओर देखते उसे भीतर जाने से रोका।

मंगल ने तलवार निकाल कर उन दोनों के सर काट दिये और खिड़की में से उन सरों को भीतर फेंक दिया।

आहट पाकर वृषभासुर नींद से जाग पड़ा, खिड़की में से मंगल को देखा।

तुरंत वह राक्षस अपने हथियार लेकर बाहर दौड़ आया।

दोनों ने द्वन्द्व-युद्ध शुरू किया। राक्षस ने अपना गदा मंगल की ओर फेंका।

गदे का निशाना चूक गया। जमीन पर गिरने से धरती हिल उठी। मंगल उसे अपने हाथ में ले राक्षस की ओर फेंकते बोला–"तुम लड़ते क्यों नहीं? क्या मेरे साथ खेलना चाहते हो?"

वृषभासुर ने लगातार सात गदे मंगल पर फेंके। निशाना देखकर सात बाण भी छोड़ दिये। उनमें एक भी मंगल पर जा न लगा।

"ठहरो, अब मेरी बारी है?" ये शब्द कहते मंगल ने अपने खड्ग से राक्षस का सर काट डाला। राक्षस का सर नीचे गिर पड़ा और पहाड़ से नीचे की ओर लुढ़कता गया।

मंगल ने अपने घोड़े को बाहर बाँध दिया। क़िले के भीतर जाकर यक्ष राजकुमार को बंधन मुक्त किया और कहा–"चलो, तुम्हारे पिता के पास चले जायेंगे।"

दोनों घोड़ों पर सवार हो यक्ष राजा के पास पहुँचे। रास्ते में यक्ष राजकुमार ने मंगल से कहा–"मंगल, अगर मेरे पिताजी तुम से कुछ माँगने को कहेंगे तो मेरी छोटी बहन को तुम अपनी पत्नी के रूप में माँगो और साथ ही उनके हाथ की अंगूठी भी माँग लो।"

Photo by Bhalchandra Kadne
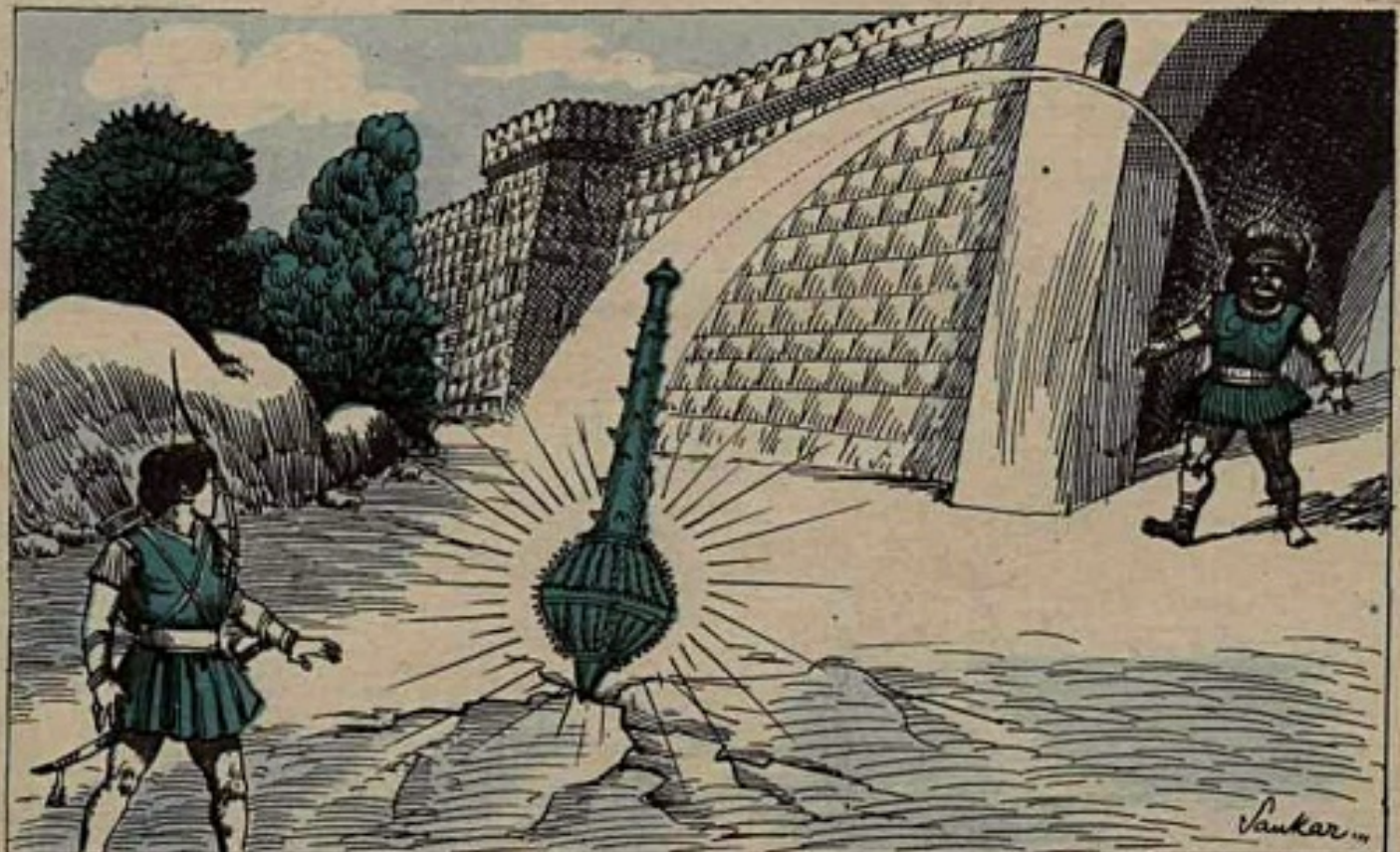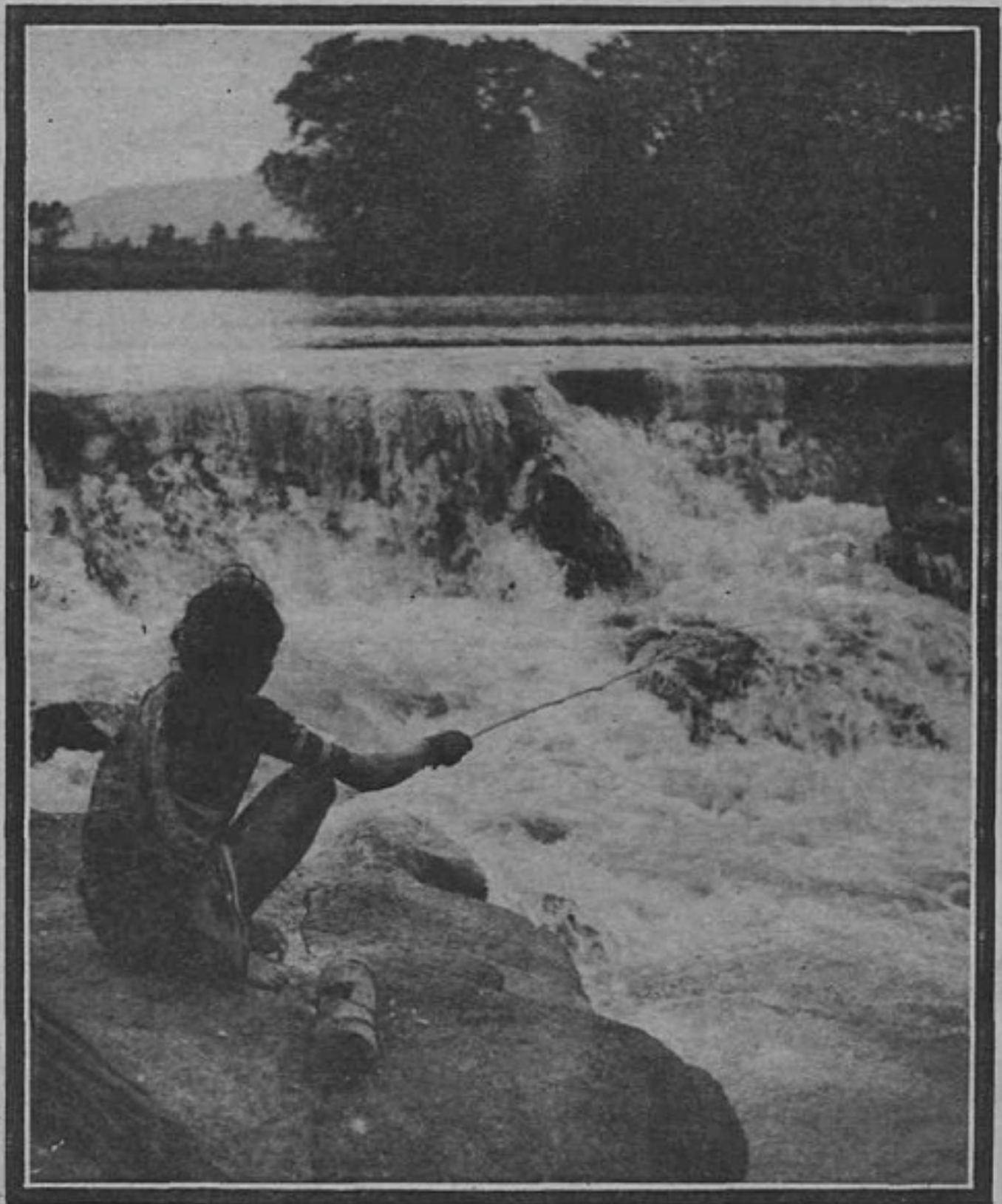
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

देखो जीवन का मेल ।

प्रेषक :
पुरुषोत्तमलाल शर्मा

Photo by Anant Desai

पुरस्कृत परिचयोक्ति

किसी की रोटी, किसी का खेल।

प्रेषक : पुरुषोत्तमलाल शर्मा

(घर-घर की कहानी पृष्ठ ६५ का शेषांश)

अपने बजट को संतुलित करने का रवि को एक अच्छा मौक़ा हाथ लगा। स्कूल के वार्षिकोत्सव में श्रवणकुमार का पात्र अभिनीत करने के उपलक्ष्य में उसे स्वर्णपदक मिला। उसने हेड़ मास्टर साहब से पदक के बदले नक़द रुपये दिलाने की प्रार्थना की। स्कूल कमिटी के चेयरमैन को रवि का यह सदाशय मालूम होने पर उन्होंने अपनी तरफ़ से पदक के सौ रुपये के अलावा एक सौ और दिया। रवि ने नम्रतापूर्वक कहा—"साहब, मुझे केवल पदक के रुपये दीजिये। दया के नहीं।"

चेयरमैन ने समझाया—"रवि, हमें गर्व है कि तुम्हारे जैसे विद्यार्थी हमारे स्कूल में पढ़ते हैं। तुम्हारा आदर्श दूसरे विद्यार्थियों के लिए अनुकरणीय है। ये रुपये देकर स्कूल का गौरव बढ़ता है।" घर लौटकर रवि अपनी माँ के चरणों में रुपये रखता है, माँ भगवान के चरणों में रखने को कहती है—परंतु श्रवणकुमार का पार्ट अदा करने वाला रवि कहता है—"माँ, तुम्हीं मेरे भगवान हो।" पुत्र-वात्सल्य से माँ का हृदय गद्गद् हो उठता है।

उसी समय शंकरनाथ अपनी तनख्वाह के छे सौ रुपये लेकर आता है। रवि के दो सौ रुपये एक हाथ में और छे सौ रुपये दूसरे हाथ में लेकर तौलते हुए कहता है—"रवि, ये दो सौ रुपये छे सौ रुपयों से ज्यादा भारी मालूम होते हैं।"

पिता के ये वचन रवि को स्कूल से प्राप्त पुरस्कार से ज्यादा मूल्यवान प्रतीत हुए। सारे परिवार में आनंद छा गया।

गोपी जुआखोरों की बुरी संगत में पड़कर अपनी माँ के दिये हुए रुपये, यहाँ तक कि ट्रान्सिस्टर तथा साइकिल भी गँवा चुका था। घर लौटने पर सीताराम के सब्र की सीमा टूट गयी। उसने क्रोध में आकर पत्नी के हाथ से चाभियाँ छीन लीं और कहा–"यह घर मेरा है और यह बेटा भी मेरा है। मुझे इन दोनों की रक्षा करनी है! किसी को यदि मेरी बात पसंद न हो तो उसके लिए बाहर का द्वार खुला है।" इसके बाद सीताराम ने गोपी को डाँटकर आदेश दिया–"तुम शाम तक ट्रान्सिस्टर और बाइसिकिल वापस न लाये तो तुम्हें घर वापस आने की जरूरत नहीं।" तब फलों की टोकरी गोपी के हाथ दे अपनी फूफी के घर भेज देता है।

गोपी जब शंकरनाथ के घर पहुँचा तो देखता क्या है, रवि रुपये दराज में रखकर चला जा रहा है। गोपी के दिमाग में ट्रान्सिस्टर तथा साइकिल छुड़ाने की चिंता सवार थी। आठ सौ रुपये मौक़े पर उसके हाथ लगे। वह भाग खड़ा होता है।

सीताराम अपनी बहन से मिलने शंकरनाथ के घर जाता है। बातचीत के दौरान रवि पर यह बात प्रकट हो जाती है कि गोपी ने ही उसके रुपये उड़ाये हैं। रवि हिम्मत के साथ जुआखोरों की माँद में घुसकर कहता है–"मेरी कड़ी मेहनत की कमाई, इनाम के रुपये पाने के लिए मैं अपनी जान की बाजी लगाऊँगा।" वह उन आवारों और जुआखोरों से अपने रुपये छीनने के लिए लड़ पड़ता है। गोपी भी उसका साथ देता है। ऐन मौक़े पर शंकरनाथ और सीताराम भी वहाँ पर पहुँच जाते हैं। गोपी के साथी चकित रह जाते हैं।

सीताराम अपने बेटे गोपी को लाठी से पीटने लगता है तो शंकरनाथ उसे समझाता है–"भाई साहब, लाड़-प्यार से बच्चे बिगड़ते हैं और लाठी से सुधरते नहीं।"

इसके बाद शंकरनाथ गोपी से कहता है–"गोपी, तुमने कभी सोचा है, जिस

रुपये को तुम इतनी बेरहमी से उजाड़ते हो, उसके लिए तुम्हारे माँ-बाप कितनी तक़लीफ़ें उठाते हैं? तुमको समझना चाहिये कि यह पसीने की कमाई होती है। हर माँ-बाप अपनी संतान को ऊपर उठाने का सपना देखते हैं। इसे पूरा करने की जिम्मेदारी तुम सब पर है। समझें! वे अपनी ज़रूरतों का गला घोंट कर तुम्हें स्कूल और कालेज में पढ़ाते हैं कि तुम ज़िंदगी में कुछ बनो। लेकिन तुम चोर बनो, जुआरी बनो, यह इन्साफ़ नहीं, अंधेर है, ज़ुल्म है!" गोपी शंकरनाथ के चरणों पर गिर कर माफ़ी मांगता है।

घर पहुँचने पर शंकरनाथ उल्लास में आकर अंत में खुशी के मारे कहता है– "आज कितना शुभ दिन है! सबको सब कुछ मिल गया! रवि को उसका खोया हुआ रुपया मिल गया। भाई साहब को उनका खोया हुआ बेटा मिल गया। मुझे तरक्क़ी का आर्डर! रवि, अब तुम जब चाहो, तब अजंता-एल्लोरा जा सकते हो। राजा को साइकिल मिल जायगी और रूपा को एक नया बढ़िया टेरिलिन का फ्राक!"

तब बच्चे एक स्वर में कह बैठते हैं– "हमें कुछ नहीं चाहिये! डैड़ी, अब हमें मालूम हो गया है कि रुपये कमाना कितना मुश्किल है और ख़र्च करना कितना आसान है। हमने सीख लिया है, डैड़ी! जितनी चादर हो, उतना ही पाँव फैलाना चाहिये।" आज शंकरनाथ पृथ्वी पर सब से प्रसन्न व्यक्ति है, क्योंकि उसने अपने घर को स्वर्ग बनाया!

बिनती !

'घर घर की कहानी' में हमने कथानायक तथा कथा-नायिकाओं पर विशेष ध्यान नहीं दिया है। हमारी इस फ़िल्म का कथानायक कोई व्यक्ति नहीं, मध्यम श्रेणी का एक परिवार है जो आज के समाज का सूत्रधार है।

हमने यह बात समझाने की कोशिश की है कि अपने सीमित साधनों के दायरे में से ही खुशी के फ़व्वारे छूटे। प्रत्येक देश उसके निवासियों के द्वारा ही प्रतिष्ठा अथवा यश प्राप्त करता है। अगर देश को सही रास्ते पर आगे बढ़ना है तो पहले उसके नागरिकों को सही रास्ते पर क़दम बढ़ाना होगा।

हमारा उद्देश्य पहले से यही रहा है कि प्रत्येक फ़िल्म के माध्यम से हम हर बार कोई न कोई नई चीज़ प्रेक्षकों के सामने रखें। 'राम और श्याम' में आप लोगों ने दिलीप कुमार का द्विपात्राभिनय देखा, 'नन्हा फ़रिश्ता' सारी फ़िल्म एक बच्ची की इर्द-गिर्द चलती है और 'घर घर की कहानी' का कथानायक मध्यम वर्ग का परिवार है।

यदि 'घर घर की कहानी' हमारे इस संदेश को हर परिवार तक पहुँचाने में सफल हुई, तो हम संपूर्ण आत्मविश्वास एवं विनम्रतापूर्ण गर्व के साथ कहेंगे कि हमने फ़िल्मी उद्योग को अपनी उत्तम से उत्तम चीज़ समर्पित की है–

मद्रास
२५-१२-७०

बी. नागि रेड्डी
चक्रपाणि
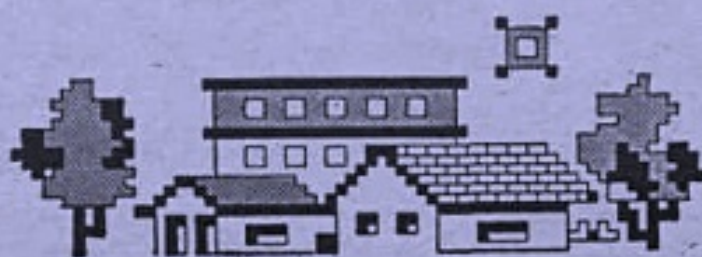
Improve your English
—and enjoy doing it.

We are sure you have enjoyed reading this copy of your magazine. But here is a good suggestion. Why not read English Chandamama as well? It is a bright, colourful magazine, full of fascinating folk-tales from India and other countries. Written in clear, concise English, it will naturally help to improve your knowledge of the language, whilst you are absorbed in reading the many stories.

Here are some of the good things in the February issue of English Chandamama.

SUSANOO AND THE EIGHT-HEADED SERPENT (JAPAN) * THE THREE SUITORS (INDIA) * TAVU THE SCHOLAR (CHINA) * THE BRAVE LITTLE MAN (GERMANY) * DIAMONDS FOR LUNCH (INDIA) * THE VILLAGE HEADMAN (INDIA) * MARYA AND THE MAGIC DOLL (FINLAND) * THE TROUBLE-SOME HEAD (INDIA) * BORN TO BE HAPPY (INDIA).

One of the special features in English Chandamama, is the Card Index of knowledge. This covers a number of interesting subjects, such as History, Sports, Geography, Science, Nature, etc. Beautifully illustrated in colour and designed so that you can cut out each set and build up a useful reference library.

CHANDAMAMA

GET A COPY TODAY — IT'S ONLY 75 PAISE.